कामुकता ध्यान और नग्नता

भगवान श्री रजनीश

24

कामुकत्ता ध्यान और नग्नता

भगवान् श्री रजनीश

जीवन जागृति आन्दोलन प्रकाशन
बम्बई, १९७४

अनुक्रम

मूल्य: ४-००

युवक और यौन

बड़ौदा विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात) में युवक और युवतियों की एक सभा में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दिया गया एक प्रवचन

एक कहानी से मैं अपनी बात शुरू करना चाहूंगा ।

एक बहुत अद्भुत व्यक्ति हुआ है। उस व्यक्ति का नाम था नसरुद्दीन। एक दिन सांझ वह अपने घर से बाहर निकलता था मित्रों से मिलने के लिए तभी द्वार पर एक बचपन का बिछड़ा हुआ साथी घोड़े पर से उतरा। बीस वर्ष बाद वह मित्र उससे मिलने आया था। लेकिन नसरुद्दीन ने कहा कि तुम ठहरो घड़ी भर, मैंने किसी को वचन दिया है, उनसे मिलकर अभी लौटकर आता हूं। दुर्भाग्य कि वर्षों बाद तुम मिले हो और मुझे घर से अभी जाना पड़ रहा है, लेकिन मैं जल्दी ही लौट आऊंगा।

उस मित्र ने कहा : तुम्हें छोड़ने का मेरा मन नहीं, वर्षों बाद हम मिले हैं। उचित होगा कि मैं भी तुम्हारे साथ चलूं। रास्ते में तुम्हें देखूंगा भी, तुमसे बात भी कर लूंगा। लेकिन मेरे सब कपडे धूल से भरे हैं। अच्छा होगा यदि तुम्हारे पास दूसरे कपड़े हों तो मुझे दे दो।

फकीर कपडे की एक जोड़ी, जिसे बादशाह ने उसे भेंट की थी -सुन्दर कोट था, पगड़ी थी जूते थे-वह अपने मित्र के लिए निकाल लाया। उसने उसे कभी पहना नहीं था। सोचा था; कभी जरूरत पडेगी तो पहनूंगा। फिर वह फकीर था। वे कपड़े बादशाही थे, हिम्मत भी उसकी पहनने की नहीं पड़ी थी। मित्रने जल्दी से वे कपड़े पहन लिए। जब मित्र कपड़े पहन रहा था तभी नसरुद्दीन को लगा कि यह

तो भूल हो गयी। इतने सुन्दर कपड़े पहनकर वह मित्र तो एक सम्राट मालूम पड़ने लगा और नसरुद्दीन उसके सामने एक फकीर, एक भिखारी मालूम पड़ने लगा। सोचा रास्ते पर लोग मित्र की तरफ ही देखेंगे जिसके कपड़े अच्छे हैं। लोग तो सिर्फ कपड़ो की तरफ देखते हैं और तो कुछ दिखायी नहीं पडता है। जिनके घर ले जाऊंगा वह भी मित्र को ही देखेंगे क्योंकि हमारी आंखे इतनी अंधी हैं कि सिवाय कपड़ो के और कुछ भी नहीं देखतीं। उसके मन में बहुत पीड़ा होने लगी कि यह कपड़े पहनाकर मैंने एक भूल कर ली। लेकिन फिर उसे ख्याल आया कि मेरा प्यारा मित्र है, वर्षों के बाद मिला है, क्या अपने कपड़े भी मैं उसको नहीं दे सकता? इतनी नीच, इतनी क्षुद्र मेरी वृति है? क्या रखा है कपड़ों में?

यही सब अपने को समझाता हुआ वह चला, रास्ते पर सारी नजरें उसके मित्र के कपड़ों पर अटक गई। जिसने भी देखा, वही गौर से देखने लगा। वह मित्र बड़ा सुन्दर मालूम पड़ रहा था। जब भी कोई उसके मित्र को देखता, नसरुद्दीन के मन में चोट लगती कि कपड़े मेरे हैं और देखा मित्र जा रहा है। फिर अपने को समझाता कि कपड़े क्या किसी के होते हैं? मैं तो शरीर तक को अपना नहीं मानता तो कपड़े को अपना क्या मानना है? इसमें क्या हर्ज हो गया है? समझाता-बुझाता अपने मित्र के घर पहुंचा। भीतर जाकर जैसे ही अन्दर गया परिवार के लोगों की नजरें उसके मित्र के कपड़ो पर अटक गई। फिर उसे चोट लगी, ईर्ष्या मालूम हुई कि मेरे ही कपडे हैं और मैं ही उसके सामने दीन लग रहा हूं। बड़ी भूल हो गई। फिर अपने को समझाया, फिर अपने मन को दबाया।

घर के लोग पूछने लगे कौन है यह? नसरुद्दीन ने परिचय दिया। कहा : मेरे मित्र हैं बचपन के, बहुत अद्भूत व्यक्ति हैं। जमाल इनका नाम है। रह गये कपड़े, सो मेरे हैं।

घर के लोग बहुत हैरान हुए। मित्र भी हैरान हुआ। नसरुद्दीन भी कहकर हैरान हुआ। सोचा भी नहीं था कि ये शब्द मुंह से निकल जायेंगे। लेकिन जो दबाया जाता है वह निकल जाता है। जो दबाओ वह निकलता है, जो 'सप्रेस' करो वह प्रकट होगा। इसलिए भूल कर भी गलत चीज न दबाना अन्यथा सारा जीवन गलत चीज की अभिव्यक्ति बन जाता है। वह बहुत घबरा गया। सोचा भी नही था कि ऐसा मुंह से निकल जाएगा। मित्र भी बहुत हतप्रभ रह गया। घर के लोग भी सोचने लगे, यह क्या बात कही! बाहर निकलकर मित्र ने कहा: क्षमा करो अब मैं तुम्हारे साथ दूसरे घर में नही जाऊंगा। यह तुमने क्या बात कही?

नसरुद्दीन की आंखों में आंसू आ गये। क्षमा मांगने लगा। कहने लगा भूल हो गई, जबान पलट गई। लेकिन जबान कभी भी नहीं पलटती है। ध्यान रखना,

जो भीतर दबा हो वह कभी भी जबान से निकल जाता है। जबान पलटती कभी भी नहीं तो वह कहने लगा क्षमा कर दो अब ऐसी भूल न होगी। कपड़े में क्या रखा है! लेकिन कैसे निकल गई यह बात, मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि कपड़े किसके है! लेकिन आदमी वही नहीं कहता जो सोचता रहता है। कहता कुछ और है, सोचता कुछ और है। कहता था मैंने तो कुछ सोचा भी नहीं, कपड़े का तो मुझे ख्याल भी नहीं आया, यह बात कैसे निकल गई! जब कि घर से चलने में और घर तक आने में सिवाय कपड़े के उसको कुछ भी ख्याल नहीं आया था।

आदमी बहुत बेईमान है। जो उसके भीतर ख्याल आता है, कभी कहता भी नहीं है। और जो बाहर बताता है वह भीतर बिल्कुल नहीं होता है। आदमी सरासर झूठ है। मित्र ने कहा, 'मैं चलता हूं तुम्हारे साथ लेकिन अब कपड़े की बात न उठाना'। नसरुद्दीन ने कहा–'कपड़े तुम्हारे ही हो गये। अब मैं वापस पहनूंगा भी नही। कपड़े में रखा क्या है?' कह तो वह रहा था कि कपडे में क्या रखा है, लेकिन दिखाई पड रह था कि कपड़े में ही सब कुछ रखा है। वे कपड़े बहुत सुन्दर थे। वह मित्र बहुत अद्भूत मालूम पड रहा है। फिर चले रास्ते पर और नसरुद्दीन फिर अपने को समझाने लगा कि कपड़े दे ही दूंगा मित्र को। लेकिन जितना समझाता था उतना ही मन कहता था कि एक बार भी तो पहने नहीं। दूसरे घर तक पहुँचे, सभलकर संयम से।

संयमी आदमी हमेशा खतरनाक होता है क्योंकि संयमी का मतलब होता है कि उसने कुछ भीतर दबा रखा है। सच्चा आदमी सिर्फ सच्चा आदमी होता है। उसके भीतर कुछ भी दबा नही रहता है। संयमी आदमी के भीतर हमेशा कुछ दबा होता है। जो ऊपर से दिखाई देता है ठीक उल्टा उसके भीतर दबा होता है। उसी को दबाने की कोशिश में वह संयमी हो जाता है। संयमी के भीतर हमेशा बारूद है जिसमें कभी भी आग लग जाय तो बहुत खतरनाक है। और चौबीस घंटे दबाना पड़ता है उसे जो दबाया गया है। उसे एक क्षण को भी फुर्सत दी, छुट्टी दी कि वह बाहर आ जाएगा। इसलिए संयमी आदमी को अवकाश कभी नहीं होता है-चौबीस घंटे जब तक जागता है। नींद में बहुत गडबड हो जाती है, सपने में सब बदल जाता है, और जिसको दबाया है वह नींद में प्रगट होने लगता है, क्योंकि नींद में संयम नहीं चलता। इसीलिए संयमी आदमी नींद से डरता है। आपको पता है, संयमी आदमी कहता है क्या सोना? इसके अलावा उसका कोई कारण नही है। नींद तो परमात्मा का अद्भुत आशिर्वाद है। लेकिन संयमी नींद से डरता है। क्योकि जो दबाया है वह नींद में धक्के मारता है, सपने बनकर आता है।

किसी तरह संयम साधना करके वह बेचारा नसरुद्दीन उस दूसरे मित्र के घर में घुसा। दबाये हुए मन को। सोच रहा है कि कपड़े मेरे नहीं हैं मित्र के ही हैं। लेकिन

जितना वह कह रहा है कि मेरे नहीं हैं मित्र के ही हैं, उतने ही कपड़े उसे अपने मालूम पड़ रहे हैं। इंकार बुलावा है। मन में भीतर 'ना' का मतलब 'हां' होता है। जिस बात को तुमने कहा 'नहीं' मन कहेगा 'हां' यही। मन कहने लगा कौन कहता है कपड़े मेरे नहीं है? और नसरुद्दीन की ऊपर की बुद्धि समझाने लगी कि नहीं, कपड़े तो मैंने दे दिए मित्र को। जब वे भीतर घर में गये तब नसरुद्दीन को देखकर कोई समझ भी नहीं सकता था कि वह भीतर कपड़े से लड़ रहा है। घर में मित्र मौजूद नहीं था, उसकी सुंदर पत्नी मिली। उसकी आँखे एकदम अटक गई मित्र के ऊपर। नसरुद्दीन को फिर धक्का लगा। उस सुंदर स्त्री ने उसे भी कभी इतने प्रेम से नहीं देखा था। पूछने लगी, ये कौन है? कभी देखा नहीं इन्हें? नसरुद्दीन ने सोचा: इस दुष्ट को कहां साथ ले आया। जो देखो इसको देखता है। और पुरुषों के देखने तक गनीमत थी। लेकिन सुन्दर स्त्रीयां भी उसी को देख रही हों तो फिर बहुत मुसीबत हो गई। प्रकट में कहा, मेरे मित्र हैं, बचपन के साथी हैं। बहुत अच्छे आदमी हैं। रह गये कपड़े, सो उन्ही के हैं–मेरे नहीं हैं।

लेकिन कपड़े अगर उन्हीं के थे तो कहने की जरूरत क्या थी? कह गया तब पता चला कि भूल हो गई। भूल का नियम है कि वह हमेशा अतियों पर होती है, एक्स-ट्रीम पर होती है। एक एक्सट्रीम से बचौ तो दूसरे एक्सट्रीम पर हो जाती है। भूल घड़ी के पेंडुलम की तरह चलती है। एक कोने से दूसरे कोने पर जाती है, बीच में नहीं रुकती। भोग से जाएगी तो एकदम त्याग पर चली जाएगी। एक बेवकूफी से छूटी, दूसरी बेवकूफी पर पहुंच जाएगी। जो ज्यादा भोजन से बचेगा वह उप-वास करेगा। और उपवास ज्यादा भोजन से भी बदतर है। क्योंकि ज्यादा भोजन भी आदमी दिन में दो एक बार कर सकता है, लेकिन उपवास करनें वाला आदमी दिन भर मन ही मन भोजन करता है। वह चौबीस घंटें भोजन करता है। एक भूल से आदमी का मन बचता है तो दूसरी भूल पर चला जाता हैं। अतियों पर वह डोलता है। एक भूल कि थी कि कपड़ें मेरे हैं, अब दूसरी भूल हो गई कि कपड़ें उसी के हैं तो साफ हो जाता है कि कपड़े उसके बिल्कुल नहीं है।

और बड़े मजे की बात है कि जोर से हमें वही बात कहनी पडती है जो सच्ची नहीं होती है। अगर तुम कहो कि मैं बहुत बहादूर आदमी हूं तो समझ लेना कि तुम पक्के नंबर एक के कायर हो। अभी हिंदुस्तान पर चीन का हमला हुआ। सारे देश में कवि पैदा हो गये जैसे बरसात में मेंढ़क पैदा हो जाते हैं। 'हम सोये हुए शेर हैं, हमें मत छेड़ो!' कभी सोये हुए शेर नें कविता की है कि हमको मत छेड़ो? कभी सोये शेर को छेड़ कर देखो तो पता चल जाएगा कि छेड़ने का क्या मतलब होता है। लेकिन हमारा पूरा मुल्क कहने लगा कि हम सोये शेर हैं। हम ऐसा कर देंगे, वैसा कर देंगे। चीन लाखों मील जमीन दबाकर बैठ गया है और हमारे सोये शेर फिर

सो गये कविता बंद करके। यह शेर होने का ख्याल शेरों को पैदा नहीं होता। वह कायरों को पैदा होता है। शेर शेर होता है। चिल्ला-चिल्लाकर कहने की उसे जरूरत नहीं होती। तो जितने जोर से हम कहते हैं, ठीक उससे उल्टा हमारे भीतर होता है। इसीलिए जोर से कुछ कहते समय जरा संभलकर कुछ कहना। अगर किसी से कहो कि मैं तुम्हें बहुत प्रेम करता हूं तो संदिग्ध है वह प्रेम। प्रेम कहीं बहुत किया जाता है! बस, किया जाता है या नहीं किया जाता है। लेकिन आदमी का मन पूरे वक्त नासमझियों के चक्कर में घुमता है।

कह तो दिया नसरुद्दीन ने कि कपड़े—कपड़ें इन्हीं के हैं लेकिन सुनकर वह स्त्री हैरान हुई। मित्र भी हैरान हुआ कि फिर वही बात! बाहर निकलकर उस मित्र ने कहा कि क्षमा करो अब मैं लौट जाता हूं। गलती हो गई है कि साथ आया। क्या तुम्हें कपड़ें ही कपड़ें दिखाई पड रहे हैं? नसरुद्दीन ने कहा: मैं खुद भी नहीं समझ पाता। आज तक जिंदगी में कपड़े मुझें दिखाई नहीं पड़े। यह पहला ही मौका है! क्या हो गया है मुझे? मेरे दिमाग में क्या गड़बड़ी हो गयी? पहले एक भुल हो गई थी, अब उससे उल्टी भूल हो गई। अब मैं कपड़े की बात ही नहीं करूँगा। बस, एक मित्र कें घर और मिलने चलना है। फिर हम वापस लौट चलेंगे। और एक मौका मुझे दो। नहीं तो जिंदगी भर के लिए अपराध मन में रहेगा कि मैंने मित्र के साथ कैसा दुर्व्यवहार किया।

मित्र साथ जाने को राजी हो गया। सोचा था अब और क्या करेगा भूल। बात खत्म हो गई। दो ही बातें हो सकती थीं और दोनों बातें हो गई हैं। लेकिन उसे पता न था कि भूल करने वाले बड़े 'इनवेंटिव' होते हैं, नयी भूलें ईजाद कर लेते हैं। शायद आपको भी पता न हो।

वे तीसरे मित्र के घर गये। अब की बार तो नसरुद्दीन अपनी छाती को दबाये बैठा है कि कुछ भी हो जाय लेकिन कपड़ों की बात न निकालूंगा। जितने जोर से किसी चीज को दबाओ उतने जोर से वह पैदा होनी शुरू होती है। किसी चीज को दबाना उसे शक्ति देने का दूसरा नाम है। दबाओ तो और शक्ति मिलती हैं उसे। जितने जोर से आप दबाते है उस जोर में जो ताकत आपकी लगती है वह उसी में चली जाती है जिसको आप दबाते है। ताकत मिल गयी उसे। अब वह दबा रहा है और पूरे वक्त पा रहा है कि मैं कमजोर पड़ता जा रहा हूं, कपड़े मजबूत होते जा रहे हैं। कपड़े जैसी फिजूल चीज भी इतनी मजबूत हो सकती है कि नसरुद्दीन जैसा ताकतवर आदमी हारा जा रहा है उसके सामने। जो किसी चीज से न हारा था, आज उसे साधारण से कपड़े हराये डालते हैं। वह अपनी पूरी ताकत लगा रहा है। लेकिन उसे पता नहीं है कि पूरी ताकत हम उसके खिलाफ लगाते हैं, जिससे हम भयभीत हो जाते हैं जिससे हार जाते हैं, उससे हम कभी नहीं जीत सकते। ताकत

से नहीं जीतना है, अभय से जीतना है, 'फियरलेसनेस' से जीतना है। बड़े से बडा ताकतवर हार जायेगा अगर भीतर भय हो तो। ध्यान रहे—हम दूसरे से कभी नहीं हारते, अपने ही भय से हारते हैं। कम से कम मानसिक जगत् में तो यह पक्का है कि दूसरा हमें कभी नहीं हराता है, दमारा भय ही हमें हरा देता है।

नसरुद्दीन जितना भयभीत हो रहा है उतनी ही ताकत लगा रहा है। और वह जितनी ताकत लगा रहा है उतना भयभीत हुआ जा रदा है क्योंकि कपड़े छूटने नहीं हैं। वे मन में बहुत चक्कर काट रहे हैं। तीसरे मकान के भीतर घुसा है। लगता है वह होश में नहीं है, बेहोश हैं। उसे न दीवालें दिख रही हैं, न घर के लोग दिखाई पड़ रहे हैं। उसे केवल वही कोट पगड़ी दिखाई पड रहे हैं, मित्र भी खो गया है। बस कपडें है और वह है। हालाँकि ऊपर से किसी को पता नहीं चलता है। जिस घर में गया, फिर आँखें टिक गयीं वहीं उसके मित्र के कपड़े पर। पूछा गया, कौन है यह? लेकिन नसरुद्दीन जैसे बुखार में हैं, वह होश में नहीं है। दमन करनें वाले लोग हरेशा बुखार में जीते हैं, कभी स्वस्थ नहीं होते। 'सप्रेशन' जो है वह 'मेंटल फीवर' है। दमन जो है वह मानसिक बुखार है। दबा लिया है और, बुखार पकड़ा हुआ है। हाथ पैर कंप रहे है उसके। वह अपने हाथ पैर रोकने की बेकार कोशिश कर रहा है। जितना रोकता है वे उतनें काँपे जा रहे हैं। कौन हैं यह? ... यह तो अब उसे खुद भी याद नहीं आ रहा है। कौन हैं यह? —शायद कपड़े हैं, सिर्फ कपड़े! साफ मालूम पड़ रहा है कि कपड़े हैं लेकिन यह कहना नहीं है। लगा जैसा बहुत मुश्किल में पड रहा है उसे याद करना। फिर बहुत मुश्किल से कहा: मेरे बचपन के मित्र हैं, नाम है फलां और रह गये कपड़े, सो कपड़े की तो बात ही नहीं करनी है। वे किसी के भी हों उनकी बात नहीं उठानी है।

लेकिन बात उठ गयी। जिसकी बात न उठानी हो उसी की बात ज्यादा उठती है!

यह छोटी सी कहानी क्यों मैंने कही? सेक्स की बात नहीं उठानी है और उसकी ही बात चौबीस घंटे उठती है। नहीं किसी से बात करनी है, तो फिर अपने से ही बात चलती है। न करे दूसरे से, तो खुद ही करनी पड़ेगी बात अपने आप से। और दूसरे से बात करने में राहत भी मिल सकती है, खुद से बात करने में कोई राहत भी नहीं है। कोल्हू के बैल की तरह अपने भीतर ही घुमते रहो। सेक्स की बात नहीं करनी है, उसकी बात ही नहीं उठानी है। मां अपनी बेटी के सामने नहीं उठाती। बेटा अपने बाप के सामने नहीं उठाता। मित्र, मित्र के सामने नहीं उठाते। क्योंकि उठानी ही नहीं है बात। जो उठाते हैं वे अशिष्ट हैं जब कि चौबीस घंटे सब के मन में वही बात चलती है।

सेक्स उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि बात न उठाने से महत्वपूर्ण हो गया

है। सेक्स उतना महत्वपूर्ण बिल्कुल नहीं है जितना कि हम समझ रहे हैं उसे। लेकिन किसी भी व्यर्थ की बात को उठाना बन्द कर दें तो वह सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हो जायेगी। इस दरवाजे पर एक तख्ती लगा दें कि यहां झांकना मना है और यहां झांकना बड़ा महत्वपूर्ण हो जायेगा। फिर चाहे आपकी युनिवर्सिटी में कुछ भी हो रहा हो, भले आइंस्टीन ही अगर गणित पर भाषण दे रहे हों– बेकार है वह सब। यह तख्ती ही महत्वपूर्ण है, यहीं झांकने की जरूरत हो जायेगी। हर विद्यार्थी यहीं चक्कर लगाने लगेगा। लड़के जरा जोर से लगायेंगे, लड़कियां जरा धीरे से। कोई बुनियादी फर्क नहीं है आदमी आदमी में। मन में भी होगा कि क्या है इस तख्ती के भीतर? यह तख्ती एकदम अर्थ ले लेगी। हां, कुछ जो अच्छे लड़के लड़कियां नहीं हैं, वे आकर सीधा झांकने लगेंगे। वे ही बदनामी उठायेंगे कि ये अच्छे लोग नहीं है। तख्ती जहां लगी थी कि नहीं झांकना है वहां एक वे ही नहीं झांकेंगे जो भद्र हैं, सज्जन हैं, अच्छे घर के या इस तरह के वहम जिनके दिमाग में है, वे उधर से तिरछी आंखें किये हुए निकल जाएंगे, आंखें तिरछी रहेंगी, दिखाई तख्ती ही पड़ेगी उन महाशय को भी। और तिरछी आंखों में जो चीज़ दिखाई पड़ती है वह बहुत खतरनाक होती है। दिखाई भी नहीं पड़ती और दिखाई भी पड़ती है। देख भी नहीं पाते, मन में भाव भी रह जाता है देखने का। फिर पीढ़ी-तजन जो यहां से तिरछी आंखें किये हुए निकल जायेंगे, वह इसका बदला लेंगे। किससे? जो झांक रहे थे उनसे। गालियां देंगे उनको कि बुरे लोग है, अशिष्ट हैं सज्जन नहीं है, असाधु है। और इस तरह मन में सांत्वना, कंसोलेशन जुटायेंगे कि हम अच्छे आदमी है, इसलिए हमने झांककर नहीं देखा। लेकिन झांक कर देखना तो जरूर था, यह मन कहे चला जाएगा। फिर सांझ होते-होते, अंधेरा घिरते-घिरते वे आयेंगे। क्लास में बैठकर पढ़ेंगे तब भी तख्ती दिखाई पड़ेगी, किताब नहीं। लेबोरेट्री में एक्सपेरीमेंट करते होंगे और तख्ती बीच-बीच में आ आएगी। साँझ तक वह आ जाएंगे देखने। आना पड़ेगा।

आदमी के मन के नियम है। इन नियमों का उल्टा नहीं हो सकता है। हाँ, कुछ जो बहुत ही कमजोर होंगे वह शायद नहीं आ पायेंगे तो रात सपने में उनको भी वहाँ आना पड़ेगा। मन के नियम अपवाद नहीं मानते हैं। जगत् के किसी नियम में कोई अपवाद नहीं होता। जगत् के नियम अत्यन्त वैज्ञानिक हैं। मन के नियम भी उतने ही वैज्ञानिक हैं। यह जो सेक्स इतना महत्वपूर्ण हो गया है वर्जना के कारण वर्जना की तख्ती लगी है। उस वर्जना के कारण यह इतना महत्वपूर्ण हो गया कि सारे मन को घेरे रहता है। सारा मन सेक्स के ईर्द-गिर्द घुमने लगता है। फ्रायड ठीक कहता है कि मनुष्य का मन सेक्स के आसपास ही घुमता है। लेकिन वह यह गलत कहता है कि सेक्स महत्वपूर्ण है इसलिये घुमता है। नहीं, घुमने का कारण है, वर्जना, इंकार, विरोध निषेध। घुमने का कारण है हजारों साल की परम्परा।

सेक्स को वर्जित, गर्हित, निंदित सिद्ध करने वाली परंपरा इसके लिये जिम्मेवार है। सेक्स को इतना महत्वपूर्ण बनाने वालों में साधु, संत, महात्माओं का हाथ है जिन्होंने तख्ती लटकाई है वर्जना की।

यह बड़ा उल्टा मालूम पड़ेगा, लेकिन यही सत्य है। और कहना जरूरी है कि मनुष्य जाति को सेक्सुआलिटी की, कामुकता की तरफ ले जाने का काम महात्माओं ने ही किया है। जितने जोर से वर्जना लगाई है उन्होंने, आदमी उतने जोर से आतुर होकर भागने लगा है। इधर वर्जना लगा दी, उधर उसका परिणाम यह हुआ है कि सेक्स आदमी की रग-रग से फूटकर निकल पड़ा है। थोड़ी खोजबीन करो, ऊपर की राख हटाओ, भीतर सेक्स मिलेगा? उपन्यास, कहानी, महान से महान साहित्यकार की जरा राख झाड़ो, भीतर सेक्स मिलेगा। चित्र देखो, मूर्ति देखो, सिनेमा देखो सब वही। और साधु संत इस वक्त सिनेमा के बहुत खिलाफ है। शायद उन्हें पता नहीं कि सिनेमा नहीं था तो भी आदमी यही सब करता था। कालिदास के ग्रंथ पढ़ो, कोई फिल्म इतनी अश्लील नहीं बन सकती जितने कालिदास के वचन हैं। उठाकर देखें पुराने साहित्य को, पुरानी मूर्तियों को, पुराने मंदिरों को। जो फिल्म में हैं वह पत्थरों में खुदा मिलेगा। लेकिन उनसे आंख नहीं खुलती हमारी। हम अन्धे की तरह पीछे चले जाते हैं–लकीरों पर।

सेक्स जब तक दमन किया जाएगा और जब तक स्वस्थ खुले आकाश में उसकी बात न होगी, और जब तक एक एक बच्चे के मन से वर्जना की तख्ती नहीं हटेगी तब तक दुनिया सेक्स के 'आब्सेसन' से मुक्त नहीं हो सकती। तब तक सेक्स एक रोग की तरह आदमी को पकड़े रहेगा। वह कपड़े पहनेगा तो नजर सेक्स पर होगी। खाना खायेगा तो नजर सेक्स पर होगी। किताब पढ़ेगा तो नजर सेक्स पर होगी। गीत गायेगा तो नजर सेक्स पर होगी। संगीत सुनेगा तो नजर सेक्स पर होगी। नाच देखेगा तो नजर सेक्स पर होगी। सारी जिंदगी उसकी सेक्स के आसपास घूमेगी।

अनातोले फ्राँस मर रहा था। मरते वक्त एक मित्र उसके पास गया और अनातोले जैसे अद्भूत साहित्यकार से उसने पूछा कि मरते वक्त तुमसे पूछता हूं अनातोले कि जिन्दगी में सबसे महत्वपूर्ण क्या है? अनातोले ने कहा, जरा पास आ जाओ, कान में ही बता सकता हूं। आसपास और लोग भी बैठे हैं। मित्र पास आ गया। वह हैरान हुआ कि अनातोले जैसा आदमी जो मकानों कि चोटिया पर चढ़कर चिल्लाने का आदी है, जो उसे ठीक लगा हमेशा कहता रहा है। वह आज भी मरते वक्त इतना कमजोर हो गया है कि जीवन की सबसे महत्वपूर्ण बात बताने को कहता है कि पास आ जा ओ, कान में कहूंगा। सुनो धीरे से कान में। मित्र पास सरक आया। अनातोले कान के पास ओंठ ले गया। लेकिन कुछ बोला नहीं। मित्र ने कहा, बोलते नहीं? अनातोले ने कहा, तुम समझ गये होओगे, अब बोलने की क्या जरूरत है।

ऐसा मजा है और मित्र समझ गये और तुम भी समझ गये होगे, लेकिन हंसते नहीं। समझ गये हैं? बोलने की कोई जरूरत नहीं है। यह क्या पागलपन है? यह कैसे मनुष्य को पागलपन की ओर ले जाने की, दुनिया को पागलखाना बनाने की कोशिश चल रही है। इसका बुनियादी कारण यह है कि सेक्स को आजतक स्वीकार नहीं किया गया। जिससे जीवन का जन्म होता है, जिससे जीवन के बीज फूटते हैं। जिससे जीवन के फूल आते हैं, जिससे जीवन की सारी सुगंध है, सारा रंग है। जिससे जीवन का सारा नृत्य है, जिसके आधार पर जीवन का पहिया घूमता है, उसको स्वीकार नहीं किया गया है। **जीवन के मौलिक आधार को अस्वीकार किया गया है।** जीवन में जो केंद्रीय था, परमात्मा जिसको सृष्टि का आधार बनाये हुए है–चाहे फूल हो, चाहे पक्षी हो, चाहे बीज हो, चाहे पौधे हों, चाहे मनुष्य हो, सेक्स जो कि जीवन के जन्म का मार्ग है, उसको ही अस्वीकार कर दिया है? उस अस्वीकृति के दो परिणाम हुए।

अस्वीकार करते ही वह सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हो गया। अस्वीकार करते ही वह सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो गया और मनुष्य के चित्त को उसने सब तरफ से पकड़ लिया। अस्वीकार करते ही उसे सीधा जानने का कोई उपाय नहीं रहा। इसलिए तिरछे जानने के उपाय खोजने पड़े जिनसे मनुष्य का चित्त विकृत और बीमार होने लगा। जिस चीज को सीधा जानने के उपाय न रह जायें और मन जानना चाहता हो, तो फिर गलत उपाय खोजने पड़ते हैं। मनुष्य को अनैतिक बनाने में तथाकथित नैतिक लोगों की वर्जनाओं का हाथ है। **जिन लोगों ने आदमी को नैतिक बनाने की चेष्टा की है दमन के द्वारा, वर्जना के द्वारा, उन लोगों ने सारी मनुष्य जाति को अनैतिक बना दिया।** और जितना आदमी अनैतिक होता चला जाता है उतनी ही वर्जना सख्त होती चली जाती है।

वे कहते हैं कि फिल्मों में नंगी तस्वीरें नहीं होनी चाहिए। वे कहते हैं कि पोस्टरों पर नंगी तस्वीरें नहीं होनी चाहिए। वे कहते हैं किताब ऐसी होनी चाहिए। वे कहते हैं फिल्म में चुंबन लेते वक्त कितने इंच का फासला हो यह भी गवर्नमेंट तय करे। वे यह सब कहते हैं। बड़े अच्छे लोग हैं वे, इसलिए वे कहते हैं कि आदमी अनैतिक न हो जाए और उनकी ये सब चेष्टायें फिल्मों को और गंदा करती चली जाती हैं। पोस्टर और अश्लील होते चले जाते हैं, किताबें और गंदी होती चली जाती हैं। हां, एक फर्क पड़ता है। किताब के भीतर कुछ रहता है, ऊपर कव्हर कुछ और रहता है। और अगर ऐसा नहीं रहता है तो लड़का गीता खोल लेता है और गीता के अंदर दूसरी किताब रख लेता है, उसको पढ़ता है, बाइबिल का कव्हर चढ़ा लेता है, ऊपर, फिर पढ़ता है। कोई लड़का बाइबिल पढ़ता है, अगर बाइबिल पढ़ता हो तो समझना भीतर कोई दूसरी किताब है। यह सब धोखा। यह 'डिसेप्सन' पैदा होता है वर्जना से। विनोबा कहते हैं, तुलसी कहते हैं, अश्लील पोस्टर नहीं चाहिए। पुरूषोत्तम टंडन तो यहां तक कहते

थे कि खजुराहो और कोणार्क के मंदिरों पर मिट्टी पोतकर उनकी प्रतिमाओं को ढंक देना चाहिए। कहीं आदमी इनको देखकर गंदा न हो जाय। और बड़े मजे की बात यह है कि तुम ढंकते चले जाओ इनको हजार साल से ढांक ही रहे हो लेकिन इनसे आदमी गंदगी से मुक्त नहीं होता है। गंदगी रोज बढ़ती चली जाती है। मैं यह पूछना चाहता हूं कि अश्लील किताब, अश्लील सिनेमा के कारण आदमी कामुक होता है या कि आदमी कामुक है इसलिए अश्लील तस्वीर है और पोस्टर चिपकाये जाते हैं। कौन है बुनियादी? बुनियाद में आदमी की मांग है अश्लील पोस्टर के लिये, इसलिए अश्लील पोस्टर लगता है और देखा जाता है। साधु संन्यासी भी देखते हैं उसको लेकिन एक फर्क रहता है। आप उसको देखते है और अगर आप पकड़ लिए जायेंगे देखते हुए तो समझा जायगा कि यह आदमी गंदा है। और अगर कोई साधु संन्यासी मिल जाय, और आप उससे कहें कि आप क्यों देख रहे हैं। तो वह कहेगा कि हम तो निरीक्षण कर रहे हैं, 'स्टडी' कर रहे हैं कि लोग किस तरह अनैतिकता से बचाये जायें। इसलिए अध्ययन कर रहे हैं। इतना फर्क पड़ेगा। बाकी कोई फर्क नहीं पड़ेगा बल्कि आप बिना देखे निकल भी जायें, साधु संन्यासी बिना देखे कभी नहीं निकल सकते हैं। क्योंकि उनकी वर्जना और भी ज्यादा है, उनका चित्त और भी वर्जित है।

एक संन्यासी मेरे पास आये। वे नौ वर्ष के थे तब दुष्टों ने उनको दीक्षा दे दी। नौ वर्ष के बच्चे को दीक्षा देना कोई भले आदमी का काम हो सकता है? नौ वर्ष का बच्चा, बाप मर गया है उसका। संन्यासियों को मौका मिल गया, उन्होंने उसको दीक्षा दे दी। अनाथ बच्चे के साथ कोई भी दुर्व्यवहार किया जा सकता था। उनको दीक्षा दे दी गई। वह आदमी–नौ वर्ष की उम्र से बेचारा संन्यासी है। अब उनकी उम्र कोई पचास साल है। वह मेरे पास रुके थे। मेरी बातें सुनकर उनकी हिम्मत बढ़ी कि मुझसे सच्ची बातें कही जा सकती हैं। इस मुल्क में सच्ची बातें किसी से भी नहीं कही जा सकतीं। सच्ची बातें कहना मत, नहीं तो फंस जाओगे। उन्होंने एक रात मुझसे कहा कि मैं बहुत परेशान हूं सिनेमा के पास से निकलता हूं तो मुझे लगता है अंदर पता नहीं क्या होता होगा? इतने लोग अंदर जाते हैं, इतनी क्यू लगाये खड़े रहते हैं, जरूर कुछ न कुछ बात होगी। हालांकि मंदिर में जब मैं बोलता हूं, तो मैं कहता हूं कि सिनेमा जाने वालें नर्क जायेंगे। लेकिन जिनको मैं कहता हूं नर्क जाओगे, वे नर्क की धमकी से भी नहीं डरते हैं और सिनेमा जाते हैं। मुझे लगता है जरूर कुछ बात होगी।

नौ साल का बच्चा था तब वह साधु हो गया। नवें साल के बाद ही उनकी बुद्धि अटकी रह गई। उससे आगे विकसित नहीं हुई, क्योंकि जीवन के अनुभव से उन्हें तोड़ दिया गया। नौ साल के बच्चे के भीतर जैसे भाव उठें कि सिनेमा के भीतर क्या हो रहा है, ऐसा उनके मन में उठता है। लेकिन किससे कहे। मुझसे कहा, तो मैंने उनसे कहा कि सिनेमा दिखला दूं आपको? वे बोले कि अगर दिखला दें तो बड़ी

कृपा होगी। झंझट छूट जाए, यह प्रश्न मिट जाए कि क्या है वहां। एक मित्र को मैंने बुलाया कि इनको ले जाओ। वे मित्र बोले कि मैं झंझट में नहीं पड़ता। कोई देख ले साधु को लाया हूं, तो मैं झंझट में पड़ जाऊंगा। अंग्रेजी फिल्म दिखाने जरूर ले जा सकता हूं इनको, क्योंकि वह मिलिट्री एरिया में है,और उधर साधुओं को मानने वाले भक्त भी न होंगे। वहां मैं इनको ले जा सकता हूं। पर वे साधु अंग्रेजी नहीं जानते थे फिर भी कहने लगे कोई हर्ज नहीं कम से कम देख तो लेंगे कि क्या मामला है।

यह चित्त है और यही चित्त वहां गाली देगा मंदिर में बैठकर कि नर्क जाओगे अगर अश्लील पोस्टर देखोगे तो। यह बदला ले रहा है। वह 'तिरछा देखकर निकल गया आदमी' बदला ले रहा है। जिसने सीधा देखा उनसे बदला ले रहा है। लेकिन सीधा देखनेवाले मुक्त भी हो सकते हैं। तिरछा देखने वाले मुक्त कभी नहीं होते। अश्लील पोस्टर इसलिए लग रहे हैं, अश्लील किताबें इसलिए पढ़ी जा रही हैं, लड़के अश्लील गालियां इसलिए बक रहे हैं. अश्लील कपड़े इसलिए पहने जा रहे हैं क्योंकि तुमने जो मौलिक था और स्वाभाविक था उसे अस्वीकार कर दिया है। उसकी अस्वीकृति के परिणाम में यह सब गलत रास्ते खोजे जा रहे है. जिस दिन दुनिया में सेक्स स्वीकृत होगा जैसे कि भोजन स्वीकृत है, स्नान स्वीकृत है. उस दिन दुनिया में अश्लील पोस्टर नहीं लगेंगे,अश्लील किताबे नहीं छपेंगी,अश्लील मंदिर नहीं बनेंगे, क्योंकि जैसे-जैसे वह स्वीकृत होता जाएगा,अश्लील पोस्टरों को बनाने की कोई जरूरत नहीं रह जाएगी। अगर किसी समाज में भोजन वर्जित कर दिया जाय कि भोजन छिपकर खाना, कोई देख न ले! अगर किसी समाज में यह हो कि भोजन करना पाप है, तो भोजन के पोस्टर सड़कों पर लगने लगेंगे फौरन। क्योंकि आदमी तब पोस्टरो से भी तृप्ति पाने की कोशिश करेगा। **पोस्टर से तृप्ति तभी पायी जाती है जब जिंदगी तृप्ति देना बंद कर देती है,** और जिंदगी में तृप्ति पाने के द्वार बंद हो जाता हैं।

वह जो इतनी अश्लीलता और कामुकता और इतनी सेक्सुआलिटी है यह सारी की सारी वर्जना का अंतिम परिणाम है। मैं युवकों से कहना चाहूंगा कि तुम जिस दुनिया को बनाने में संलग्न हो उसमें सेक्स को वर्जित मत करना अन्यथा आदमी और भी कामुक से कामुक होता चला जाएगा। मेरी यह बात देखने में बड़ी उल्टी लगेगी। अखबार वाले और नेतागण चिल्ला-चिल्लाकर घोषणा करते है कि मैं लोगो में काम का प्रचार कर रहा हूं। सच्चाई उल्टी है जब कि मैं लोगों को काम से मुक्त करना चाहता हूं और प्रचार वे कर रहे हैं। लेकिन उनका प्रचार दिखाई नहीं पड़ता। क्योंकि हजारो साल की परंपरा से उनकी बातें सुन-सुनकर हम अंधे और बहरे हो गये हैं। हमें ख्याल ही नहीं रहा। कि वे क्या कह रहे हैं। मन के सूत्रों का, मन के विज्ञान का कोई बोध ही नहीं रहा कि वे क्या कर रहे हैं, वे क्या करवा रहे हैं। इसलिए आज जितना कामुक आदमी भारत में है उतना कामुक आदमी पृथ्वी के किसी कोने में नहीं है।

मेरे एक डॉक्टर मित्र इंग्लैंड के एक मेडिकल कांग्रेस में भाग लेने गये थे। हाइड पार्क में उनकी सभा होती थी। कोई पांच सौ डॉक्टर इकट्ठे थे। बातचीत चलती थी। खाना पीना चलता था। लेकिन पास की बेंच पर एक युवक और युवती गले में हाथ डाले अत्यंत प्रेम में लीन आंखें बंद किये बैठ थे। उन मित्र के प्राणों में बैचेनी होने लगी। भारतीय प्राण में चारों तरफ झांकने का मन होने लगा। अब खाने में उनका मन न रहा। अब चर्चा में उनका रस न रहा। वे बार-बार लौटकर उस बेंच की तरफ देखने लगे; पुलिस क्या कर रही है? वह बंद क्यो नहीं करती यह सब? यह कैसा अश्लील देश है। यह लड़के और लड़की आंख बंद किये हुए चुपचाप पांच सौ लोगों की भीड़ के पास ही बेंच पर बैठे हुए प्रेम प्रकट कर रहे हैं। कैसे लोग हैं, यह क्या हो रहा है? यह बर्दाश के बाहर है। पुलिस क्या कर रही है? बार-बार वह वहां देखते। पड़ोस के एक आस्ट्रेलियन डॉक्टर ने उनको हाथ से इशारा किया और कहा: वहां बार-बार मत देखिए, नहीं तो पुलिस वाला आपको यहां से उठाकर ले जाएगा। वह अनैतिकता का सबूत है। यह दो व्यक्तियों की निजी जिंदगी की बात है, और वे दोनों व्यक्ति इसीलिए पांच सौ लोगों की भीड़ के पास भी शांति से बैठे हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि यहां सज्जन लोग इकट्ठे हैं.कोई देखेगा नहीं, किसी को प्रयोजन भी क्या है? आपका यह देखना बहुत गर्हित है, बहुत अशोभन है, बहुत अशिष्ट है। यह अच्छे आदमी का सबूत नहीं है। आप पांच सौ लोगों को देख रहे हैं, कोई फिक्र नहीं कर रहा है। क्या प्रयोजन है किसी को? यह उनकी अपनी बात है और दो व्यक्ति इस उम्र में प्रेम करें तो पाप क्या है? और प्रेम में वे आंख बंद करके पास-पास बैठे हो तो हर्जा क्या है? आप परेशान हो रहे हैं! न तो कोई आपके गले में हाथ डाले हुए है, न कोई आपसे प्रेम कर रहा है।

वह मित्र मुझसे लौटकर कहने लगे कि मैं इतना गबड़ा गया कि ये कैसे लोग हैं। लेकिन धीरें–धीरे उनकी उनकी समझ में यह बात पड़ी कि गलत वे ही थे।

हमारा पूरा मुल्क ही एक दूसरे घर में, दरवाजे में 'की होल' रहता है न उसमें से झांक रहा है–कहां क्या हो रहा है, कौन क्या कर रहा है? कौन कहां जा रहा है, कौन किस के साथ है? कौन किसके गले में हाथ डाले है, कौन किसका हाथ हाथ में लिए है? क्या बदतमीजी है, कैसी संस्कारहीनता है। यह सब क्या है? यह क्यों हो रहा है? यह हो रहा है इसलिए कि भीतर वह जिसको दबाता है वह सब तरफ से दिखाई पड़ रहा है, वही दिखाई पड़ रह है।

युवकों से मैं कहना चाहता हूं कि तुम्हारे माँ बाप, तुम्हारे पुरखे, तुम्हारी हजारों साल की पीढ़ियां सेक्स से भयभीत रहीं हैं। तुम भयभीत मत रहना। **तुम समझने की कोशिश करना उसे। तुम पहचानने की कोशिश करना।** तुम बात करना। तुम सेक्स के संबंध में आधुनिक जो नई खोजें हुई हैं उनको पढ़ना, चर्चा करना और

समझने की कोशिश करना कि क्या है सेक्स? क्या है सेक्स का मेकेनिज्म, उसका यंत्र क्या है? क्या है उसकी आकांक्षा? क्या है प्यास? क्या है प्राणों के भीतर छिपा हुआ राज? इसको समझना। इसकी सारी की सारी वैज्ञानिकता को पहचानना। इससे भागना, 'एस्केप' मत करना, आँख बंद मत करना। और तुम हैरान हो जाओगे कि तुम जितना समझोगे उतने ही मुक्त हो जाओगे। तुम जितना समझोगे उतने ही स्वस्थ हो जाओगे। तुम जितना सेक्स के 'फैक्ट' को समझ लोगे उतना ही सेक्स के 'फिक्शन' से तुम्हारा छुटकारा हो जायेगा।

तथ्य को समझते ही आदमी कहानियों से मुक्त हो जाता है और जो तथ्य से बचता है वह कहानियों में भटक जाता है। कितनी सेक्स की कहानियां चलती हैं और कोई मजाक ही नहीं है हमारे पास, बस एक ही मजाक है कि सेक्स की तरफ इशारा करें और हँसें। हद हो गई। तो जो आदमी सेक्स की तरफ इशारा करके हंसता है वह आदमी बहुत ही क्षुद्र है। सेक्स की तरफ इशारा करके हंसने का क्या मतलब है? उसका एक ही मतलब है कि आप बात समझते ही नहीं। बच्चे तो बहुत तकलीफ में हैं कि उन्हें कौन समझाये, किससे वे बातें करें, कौन सारे तथ्यों को सामने रखे? उनके प्राणों में जिज्ञासा है, खोज है, लेकिन उसको दबाये चले जाते हैं, रोके चले जाते हैं। उसके दुष्परिणाम होते हैं, जितना रोकते हैं उतना मन वहां दौड़ने लगता है और इस रोकने और दौड़ने में सारी शक्ति और ऊर्जा नष्ट हो जाती है।

यह मैं आपसे कहना चाहता हूं कि **जिस देश में भी सेक्स को स्वस्थ रूप से स्वीकृति नहीं होती उस देश की प्रतिभा का जन्म ही नहीं होता है।** पश्चिम में तीन सौ वर्षों में जीनियस पैदा हुआ है, जो प्रतिभा पैदा हुई है वह सेक्स के तथ्य की स्वीकृति से पैदा हुई है। जैसे ही सेक्स स्वीकृत हो जाता है वैसे ही जो शक्ति हमारी लड़ने में नष्ट होती है वह शक्ति मुक्त हो जाती है, वह 'रिलीज' हो जाती है, **और उस दिन शक्ति को फिर हम रूपान्तरित करते हैं, पढ़ने में, खोज में, आविष्कार में, कला में, संगीत में, साहित्य में।** और अगर वह शक्ति सेक्स में ही उलझी रह जाय, जैसा कि सोच लें कि वह आदमी जो कपड़े में उलझ गया है—नसरुद्दीन, वह कोई विज्ञान के प्रयोग कर सकता था बेचारा? कि वह कोई सत्य का सृजन कर सकता था? कि वह कोई मूर्ति का निर्माण कर सकता था? वह कुछ भी करता कपड़े ही कपड़े उसके चारों तरफ घूमते रहते और वह कुछ भी नहीं कर पाता।

भारत के युवक के चारों तरफ सेक्स घूमता रहता है पूरे वक्त। और इस घूमने के कारण उसकी सारी शक्ति इसी में लीन और नष्ट हो जाती है। जब तक भारत के युवक की सेक्स के इस रोग से मुक्ति नहीं होती तब तक भारत के युवक की प्रतिभा का जन्म नहीं हो सकता है। प्रतिभा का जन्म तो उसी दिन होगा जिस दिन इस देश में सेक्स की सहज स्वीकृति हो जायेगी, हम उसे जीवन के एक तथ्य की

तरह अंगीकार कर लेंगे—प्रेम से, आनंद से—निन्दा से नहीं, घृणा से नहीं। और निन्दा और घृणा का कोई कारण भी नहीं है।

सेक्स जीवन का अद्भुत रहस्य है। वह जीवन की अद्भुत मिस्ट्री है। उससे कोई घबराने की, भागने को जरूरत नहीं है। जिस दिन हम इसे स्वीकार कर लेंगे उस दिन इतनी बड़ी ऊर्जा मुक्त होगी भारत में कि हम न्यूटन पैदा कर सकेंगे, हम आइंस्टीन पैदा कर सकेंगे। उस दिन हम भी चांद-तारों की यात्रा करेंगे, लेकिन अभी नहीं। अभी तो हमारे लड़कों को लड़कियों के स्कर्ट के आसपास परिभ्रमण करने से ही फुर्सत नहीं है, चांद-तारों का परिभ्रमण कौन करेगा? लड़कियां चौबीस घंटे अपने कपड़ों को चुस्त करने की कोशिश करें या कि चांद-तारों का विचार करें? यह नहीं हो सकता। यह सब सेक्सुआलिटी का रूप है। हम शरीर को नंगा देखना और दिखाना चाहते हैं इसलिए कपड़े चुस्त होते चले जाते हैं। सौन्दर्य की बात नही है यह क्योंकि कई बार चुस्त कपड़े शरीर को बहुत बेहुदा और भोंडा बना देते हैं। हां, किसी शरीर पर चुस्त कपड़े सुन्दर भी हो सकते हैं। किसी शरीर पर ढीले कपड़े सुन्दर हो सकते हैं और ढीले कपड़े की शान ही और है। ढीले कपड़ों की गरिमा और है। ढीले कपड़ों की पवित्रता और है। लेकिन वह हमारे ख्याल में नहीं आयेगा। हम समझेंगे यह फैशन है, यह कला है, अभिरुचि है, 'टेस्ट' है। नहीं, 'टेस्ट' नही है, अभिरुचि भी नहीं है। वह जो जिसको हम छिपा रहे हैं भीतर दूसरे रास्तों से प्रकट होने की कोशिश कर रहा है। लड़के लड़कियों का चक्कर काट रहे हैं, लड़कियां लड़कों के चक्कर काट रही हैं। तो चांद-तारों का चक्कर कौन काटेगा कौन जायेगा वहां? और प्रोफेसर? वे बेचारे तो बीच में पहरेदार बने हुए खड़े हैं ताकि लड़के लड़कियां एक दूसरे का चक्कर न काट सकें। कुछ और उनके पास काम नहीं है। जीवन के और किसी सत्य की खोज में उन्हें इन बच्चों को नहीं लगाना है। बस, ये सेक्स से बच जायें, इतना ही काम कर दे तो उन्हें लगता है कि उनका काम पूरा हो गया।

यह सब कैसा रोग है। यह कैसा 'डिसीज्ड माइंड' (विकृत दिमाग) है हमारा! हम सेक्स के तथ्यों की सीधी स्वीकृति के बिना इस रोग से मुक्त नही हो सकते, यह महान् रोग है।

इस पूरी चर्चा में मैंने यह कहने की कोशिश की है कि मनुष्य को क्षुद्रता से ऊपर उठना है। जीवन के सारे सांधारण तथ्यों से जीवन के बहुत ऊंचे तथ्यों की खोज करनी है। सेक्स सब कुछ नहीं है। परमात्मा भी है दुनिया में। लेकिन उसकी खोज कौन करेगा? सेक्स सब कुछ नही है इस दुनिया में, सत्य भी है। उसकी खोज कौन करेगा? यही जमीन से अटके अगर हम रह जाएंगे तो आकाश की खोज कौन करेगा? पृथ्वी के कंकड़ पत्थरों को हम खोजते रहेंगे तो चांद-तारों की तरफ आंखें कौन उठायेगा? पता भी नहीं होगा उनको जिन्होंने पृथ्वी की ही तरफ आंख लगाकर

जिंदगी गुजार दी, उन्हें पता नहीं चलेगा कि आकाश में तारे भी हैं, आकाश गंगा भी है, रात्रि के सन्नाटे में मौन सन्नाटा भी है आकाश का। बेचारे कंकड़ पत्थर बीनने वाले लोग, उन्हें पता भी कैसे चलेगा कि और आकाश भी हैं। और अगर कभी कोई कहेगा कि आकाश भी हैं जहाँ चमकते हुए तारे भी हैं, तो वे कहेंगे सब झूठी बात-चीत है, कोरी कल्पना है। सच में तो केवल पत्थर ही पत्थर हैं। हां, कही रंगीन पत्थर भी होते हैं। बसा इनी ही जिंदगी है।

नही, मैं कहता हूं **इस पृथ्वी से मुक्त होना है ताकि आकाश दिखाई पड़ सके। शरीर से मुक्त होना है ताकि आत्मा दिखाई पड़ सके और सेक्स से मुक्त होना है ताकि समाधि तक मनुष्य पहुंच सके।** लेकिन, उस तक हम नहीं पहुंच सकेंगे, अगर हम सेक्स से बंधे रह जाते हैं तो। और सेक्स से हम बंध गये हैं। क्योंकि हम सेक्स से लड़ रहे हैं। लड़ाई बाँध देती है, समझ मुक्त कर देती है। 'अंडरस्टैंडिंग' चाहिए, समझ चाहिए। सेक्स के पूरे रहस्य को समझो, बात करो, विचार करो। मुल्क में हवा पैदा करो कि हम इसे छिपायेंगे नहीं, समझेंगे। अपने पिता से बात करो, अपनी मां से बात करो। वैसे वे बहुत घबड़ायेंगे। अपने प्रोफेसर्स से बात करो, अपने कुलपति को पकड़ो और कहो कि हमें समझाओ। जिंदगी के सवाल हैं ये। वे भागेंगे, वे डरे हुए लोग हैं, डरी हुई पीढ़ी से आय हैं। उनको पता भी नहीं है कि जिंदगी बदल गई है। अब डर से काम नहीं चलेगा। **जिंदगी का एनकाउंटर चाहिए, मुकाबला चाहिए।** जिंदगी से लड़ने और समझने की तैयारी करो। मित्रों का सहयोग लो, शिक्षकौं का सहयोग लो, मां बाप का सहयोग लो।

वह मां गलत हैं जो अपनी बेटी को और अपने बेटे को वे सारे राज नहीं बता जाती जो उसने जाने, क्योंकि उसके बताने से बेटा और उसकी बेटी भूलों से बचेंगे उसके न बताने से उनसे भी उन्ही भूलों के दोहरने की संभावना हैं, जो उसने खुद की होंगी। बाप गलत है जो अपने बेटे को अपनी प्रेम की और अपनी सेक्स की जिंदगी की सारी बातें नहीं बता देता, क्योंकि बता देने से बेटा उन भूलों से बच जाएगा जो उसने की हैं। शायद बेटा ज्यादा स्वस्थ हो सकेगा। लेकिन, वही बाप इस तरह जियेगा कि बेटे को पता चले कि उसने प्रेम ही नहीं किया। वह इस तरह खड़ा रहेगा आंखें पत्थर की बना के, कि इसकी जिंदगी में कभी कोई औरत इसे अच्छी ही नहीं लगी।

यह सब झूठ है। यह सरासर झूठ हैं। तुम्हारे बाप ने भी प्रेम किया है। उनके बाप ने भी प्रेम किया था। सब बाप प्रेम करते रहे हैं, लेकिन सब बाप धोखा देते रहे हैं। तुम भी प्रेम करोगे और बाप बनकर धोखा दोगे। यह धोखे की दुनिया अच्छी नहीं हैं। दुनिया साफ सीधी होनी चाहिए। जो बाप ने अनुभव किया हे वह बटे को

दे जाय। जो मां ने अनुभव किया वह बेटी को दे जाय। जो ईर्ष्या उसने अनुभव की हैं, जो प्रेम के अनुभव किये हैं, जो गलतियां उसने की हैं, जिन गलत रास्तों पर वह भटकी है और भरमी है उस सबकी कथा को अपनी बेटी को दे जाये। जो नहीं दे जाते हैं वे बच्चे का हित नहीं करते हैं। अगर हम ऐसा कर सके तो दुनिया ज्यादा साफ होगी।

हम दूसरी चीजों के संबंध में साफ हो गये हैं। शायद केमेस्ट्री के संबंध में कोई बात जाननी हो तो सब साफ है। फिजिक्स के संबंध में कोई बात जाननी हो तो सब साफ है। भूगोल के बाबत जाननी हो तो सब साफ है। नक्शे बने हुए है। लेकिन आदमी के बाबत साफ नहीं है, कहीं कोई नक्शा नहीं है। आदमी के बाबत सब झूठ है। दुनिया सब तरफ से विकसित हो रही है, सिर्फ आदमी विकसित नहीं हो रहा है। आदमी के संबंध में भी जिस दिन चीजें साफ-साफ देखने की हिम्मत हम जुटा लेंगे उस दिन आदमी का भी विकास निश्चित है।

यह थोड़ी सी बातें मैंने कहीं। मेरी बातों को सोचना। मान लेने को कोई जरूरत नहीं, क्योंकि हो सकता है कि जो मैं कहूं बिल्कुल गलत हो। तो सोचना, समझना, कोशिश करना। हो सकता है कोई सत्य तुम्हें दिखाई पड़े। जो सत्य तुम्हें दिखाई पड़ जाएगा वही तुम्हारे जीवन में प्रकाश का दिया बन जाएगा।

अश्लील फिल्म से नहीं - चित्त से मुक्ति

अहमदाबाद में देश के जलते प्रश्न प्रवचन माला में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दिया गया प्रवचन का एक अंश

● एक मित्र ने पूछा है कि साधु-संन्यासी सदा फिल्मों के विरोध में हैं, तो आपका क्या कहना है ?

यह अंतिम प्रश्न है। इस सम्बन्ध में बात कर लेनी उचित है, क्योंकि इधर भारत में ऐसा समझा जा रहा है कि फिल्मों के कारण लोग बिगड़े जा रहे हैं, यह बिलकुल उलटी बात है। बिगड़े हुए लोगों की वजह से अच्छी फिल्में बनानी मुश्किल हो रही हैं। फिल्म की वजह से कोई नहीं बिगड़ रहा है। कोई फिल्म किसी को बिगाड़ नहीं सकती। लेकिन लोग अगर बिगड़े हैं तो अच्छी फिल्म को चलाना मुश्किल है। और फिल्म एक अर्थ में बहुत बड़ा काम कर रही हैं कि जो काम आप करना चाहते हैं, और नहीं कर पाते, उसे फिल्म में देखकर राहत मिल जाती है और शांति से घर लौट आते हैं। अगर फिल्में न हों तो यह काम आप सड़कों पर खड़े होकर करेंगे और उपद्रव बढ़ेगा, कम नहीं होगा। इसके पीछे मनोवैज्ञानिक कारण हैं। अगर डिटेक्टिव फिल्म में हत्या की कोई घटना हो और अपराधी की कार के पीछे पुलिस लगी हो, तो आपने देखा है कि फिल्म देखने वाले सारे लोगों की रीढ़ सीधी हो जाती है, फिर कोई कुर्सी से टीका नहीं रह जाता। उनके भीतर भी कुछ हो रहा है, वे भी तैयार हो गए हैं, जैसे कि कार की स्टेयरिंग पर वे खुद ही बैठे हों। उनके हाथ-पैर तैयार हो गए हैं, सांस बंद हो गई हैं, पलकों ने झपकना बन्द कर दिया है। कहीं एक क्षण चूक न जाये तो चूक जायं। इस फिल्म में उनके भीतर जो उत्तेजना की आकांक्षा है, वह तृप्त हो जाती है। अगर फिल्में अलग कर दी जायं तो यह उत्तेजना दमें और रास्तों से लानी पड़ेगी।

विनोबा जी, आचार्य तुलसी और इस तरह के लोग फिल्मों के बड़े विरोधी हैं। वे कहते हैं फिल्में अश्लील हैं। अश्लील फिल्में नहीं बननी चाहिए। और मैं आपसे कहता हूं कि अश्लील फिल्मों के कारण आदमी कम अश्लील है। अगर फिल्में अश्लील न हों तो आदमी को अश्लील होना पड़ेगा। और कौन कहता है कि फिल्मों की वजह से अश्लीलता है ! कालिदास. ने तो फिल्म नहीं देखी थी, जहां तक मेरा खयाल है। लेकिन अगर उनके नाटक पढ़े तो आज की कोई फिल्म उतनी अश्लील नहीं है जितना कालिदास रहे हैं। कालिदास जंगल में भी जायं, तो फलों में उन्हें फल नहीं दिखाई पड़ते हैं, स्त्रियों के स्तन ही दिखाई पड़ते हैं। तो क्या यह दिमाग फिल्म से लिया गया था ? कालिदास का दिमाग फिल्म ने खराब किया था ? खजुराहो के मंदिरों को कोई फिल्म एक्टरों ने खोदा है ? खजुराहो के मंदिरों पर मैथुन के चित्र किसने खोदे हैं ? यह तो आज के नहीं हैं। कामसूत्र किसने लिखा है ? यह तो आज का नहीं है। और भर्तुहरि के शृंगारशतक किसने रचे है ? यह तो इसमें फिल्म प्रोड्यू-सर का कोई भी हाथ सिद्ध नहीं किया जा सकता है। आदमी जो चाह रहा है

हमेशा से, वह अलग-अलग माध्यम में उसे देना पड़ा है। आदमी बदले तो बदलाहट हो सकती हैं, माध्यम बदलने से कुछ नहीं हो सकता। अब वे कहते हैं कि नग्न तस्वीरें न हों, लेकिन आदमी नग्न तस्वीरें देखना चाहता है।

मैं दिल्ली में था। साधुओं ने एक सम्मेलन किया था, अश्लील पोस्टरों के खिलाफ। भूल से वे मुझे बुला ले गए, क्योंकि लोग भूल से मुझे बुला लेते हैं तब पीछे बहुत पछताते हैं। उन्होंने समझा, अश्लील पोस्टर के खिलाफ हूं। अश्लील पोस्टर के खिलाफ कौन नहीं बोलेगा! तो मैं बड़ा हैरान हुआ। मैंने उन साधुओं से कहा कि पहली बात तो यह है कि आप साधु हो, आप अश्लील पोस्टर देखने गये क्यों? आप किसलिए गए? तुम्हें किसी ने बुलाया था अश्लील पोस्टर देखने को? तुम किसलिए अश्लील पोस्टर देखने जाते हो? तुम्हें किसलिए परेशानी है? उन्होंने कहा कि हम तो इसलिए देखने जाते हैं कि लोग उनको देखकर बिगड़ न जायं। अगर आप सिनेमा में पकड़े जायं और आप विद्यार्थी हैं, तो आपका शिक्षक आपको समझायेगा; और अगर शिक्षक पकड़ा जाय, तो वह कहेगा कि हम देखने आये थे कि कौन-कौन विद्यार्थी आये थे। बड़े मजे की बात है। ये साधु आदमी पोस्टर देखने जाते हैं, बेचारे कृपा करके, ताकि दूसरे लोग न बिगड़ जायं और सच बात यह है कि साधु जितना नग्न तस्वीरें देखना चाहते हैं उतना कोई भी नहीं देखना चाहता, क्योंकि साधु ने जिंदगी से अपने को तोड़ लिया है। उसकी आकांक्षाये भीतर दबी रह गई हैं।

मैंने उन संन्यासी से कहा, आप क्यों परेशान हैं अश्लील पोस्टरों से? और ध्यान रहे, आदमी नग्न स्त्री को देखना चाहता है बजाय अश्लील पोस्टरों को मिटाने की कोशिश के। क्यों? यह सोचना जरूरी है कि आदमी नग्न स्त्री में इतना उत्सुक क्यों है? उत्सुकता का कारण क्या है? उत्सुकता का कारण हैं और कारण साधु-संतो ने ही दिया हैं। कारण यह है कि हम स्त्री-पुरुष को इतने दूरी पर खड़ा करते हैं कि करीब-करीब वे एक जाति के प्राणी नहीं, दो अलग जाति के जानवर हो जाते हैं। उन्हें अलग-अलग बड़ा करके फासले को इतना बड़ा करते हैं कि एक दूसरे को जानने कि उत्सुकता शेष रह जाती है। और फासले इतने ज्यादा होते हैं कि जानने का मौका ही नहीं मिलता है एक दूसरे को। अगर लड़के और लड़कियों को करीब और निकट बड़ा किया जा सके, तो वे एक दूसरे के साथ खेलते हों; दौडते हों, तैरते हों तो अश्लील पोस्टर धीरे-धीरे बिदा हो जायेंगे।

अभी मैंने एक घटना पढ़ी। सिडनी में एक नग्न अभिनेत्री को लाया गया दर्शन के लिए। सिडनी बीस लाख की आबादी का शहर है। बहुत प्रचार

किये गये। दो आदमी टॉकीज में देखने गये, सिर्फ दो आदमी! अहमदाबाद में कितने आदमी जाते, सोच सकते हैं? अगर दो आदमी भी पीछे रह जाते तो चमत्कार है। सभी लोग जाते, जाना ही पड़ता। इसमें कोई उपाय नहीं था, फिर इतना फर्क पड़ता कि कुछ लोग सामने के दरवाजे से जाते, कुछ सज्जन लोग पीछे के दरवाजे से जाते। यह फर्क पड़ सकता था, लेकिन जाना तो पड़ता। दो आदमी देखने आये सिडनी में, एक चमत्कार है। एक नग्न सुन्दरी का नृत्य हो रहा हो और पूरी टॉकीज खाली हो और केवल दो आदमी देखें, यह बात क्या है? सिडनी में क्या बात हो गई है? स्त्री और पुरुष इतने निकट बड़े हुए हैं कि यह बात बेहूदी है। अगर हम यह घोषणा करें कि एक आदमी का नंगा नाच दिखाया जायेगा, तो क्या आप देखने जायेंगे? नहीं जायेंगे, क्योंकि नंगे आदमी आप देख चुके हैं और कोई कारण नहीं है।

बर्टेन्ड रसेल ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है कि एक जमाना ऐसा था कि इंग्लैंड में विक्टोरियन युग में स्त्रियां इतना बड़ा घाघरा पहनती थी कि उनके पैर का अंगूठा भी नहीं दिखाई पड़ता था। उसने लिखा है कि उस जमाने में बड़ी अजीब बात थी कि अगर किसी स्त्री का पैर का अंगूठा दिख जाय तो बड़ी रस-विमुग्धता पैदा हो जाती थी--चित्त रसमग्न हो जाता था--काव्य का झरना बहने लगता था पैर का अंगूठा देखकर। अभी हम कहेंगे कि पैर का अंगूठा देखकर कविता निकलती थी, पागल हो गये थे लोग! अब तो पैर के अंगूठे सब तरफ दिखाई पड़ रहे हैं, तो कोई कविता नहीं निकलती। सिडनी में नग्न स्त्री को देखकर भी कोई कविता नहीं निकली। हिन्दुस्तान में अभी भी निकलती है।

अश्लील फिल्म बनानी पड़ती हैं, अश्लील पोस्टर लगाना पड़ता हैं, क्योंकि हमारी मांग है। और अश्लील पोस्टर न लगेगा, नग्न फिल्म न होगी तो खतरे में होंगे। सड़क पर वस्त्र पहनकर स्त्री को न चलने देंगे। स्त्री सड़क पर निर्वस्त्र नहीं की जा रही है, क्योंकि निर्वस्त्र स्त्रियों को देखने की टॉकीज में व्यवस्था है, मौका मिल जाय, हिन्दू-मुसलमान दंगा हो जाय, फिर हम फिल्म की फिक्र करते हैं? फिर जो भी स्त्री मिल जाय, उसे नग्न कर लेते हैं। हम कर लेंगे। साधु-संत उससे छुटकारा नहीं दिला सकते, क्योंकि वे ही उस वृत्ति को जन्माने में मूलभुत कारण हैं।

स्त्री और पुरुष को निकट लाना पड़ेगा, सरलता से निकट लाना पड़ेगा। वे जितने निकट आ जायेंगे उतने ही उनके फासले से पैदा हुई बीमारियां दूर हो जायेंगी। भारत में जलता हुआ प्रश्न यह भी है। विशेषकर युवकों के सामने।

सौंदर्य का मन्दिर

एक मित्र आये । उन्होंने कहा कि मैं तो साठ वर्ष का हो गया हूं, लेकिन अब भी सुन्दर स्त्री को देखता हूं तो बेचैन और परेशान हो जाता हूं । जीवन भर मैंने कोशिश की है कि अपने मन से स्त्रियों को अलग कर लूं, लेकिन इस उम्र में भी स्त्री मेरा पीछा कर रही है ।

मैंने कहा कि वह पीछा करती चली जायेगी । आप कब्र में चले जायेंगे और वह पीछा लरती चली जायेगी । आप पीछा करवा रहे हैं । जीवन की कला स्त्री से भागना नहीं सिखाती है सौंदर्य से आंखें फेरना नहीं सिखाती हैं, बल्कि इस जिज्ञासा में और ऊपर आना कि जो सौंदर्य दिखाई पड़ रहा है, वह कहां से आ रहा है । सौंदर्य क्या है ? अगर एक स्त्री में भी सौंदर्य दिखाई पड़े तो दिखाई पड़ सकता है । फूल में दिखाई पड़ सकता है तो स्त्री में क्यों नहीं, पुरुष में क्यों नहीं, आंखों में क्यों नहीं, शरीर में क्यों नहीं ? फूल भी एक शरीर है, चांद भी एक शरीर है, तारे भी एक शरीर हैं । तो आदमी के शरीर का ही कसूर है ? लेकिन अगर सौंदर्य का विरोध न होता, अगर निंदक की दृष्टि न होती, तो शायद उस सौंदर्य में गहरा प्रवेश होता, जहां से जीवन के सारे आनन्द और सारी खुशियां आती हैं, तो शायद फिर एक स्त्री मन्दिर बन जाती, उसके भीतर परमात्मा दिखाई पड़ जाता । तो मैं नहीं कहता कि आप भागें इस सौन्दर्य से, रूप से, संगीत से, सुगन्ध से, सुवास से, स्वाद से किसी से भी मत भागें । सभी के भीतर खोज करें कि जो आकर्षित कर रहा है, जरूर वहां कहीं भीतर परमात्मा होगा ।

मुक्त यौन

उपनिषद् में एक कहानी है, सत्यकाम जाबाल की। बहुत बदल जाता है इसलिये हम कहानी को बढ़ियां रूप दे देते हैं। सत्यकाम गुरु के आश्रम गया तो गुरु ने पूछा, तेरे पिता का नाम क्या है ? तो वह वापिस लौटा । उसने अपनी मां को कहा कि मेरे पिता का नाम क्या है ? तो उसकी मां ने कहा, जब मैं युवा थी और तेरा जन्म हुआ तो बहुत से लोगों की मैं सेवा करती थी । कौन तेरा पिता है, मुझे पता नहीं । तो तू जा वापस । अपने गुरु को कह देना सत्यकाम मेरा नाम हैं, जाबाला मेरी मां का नाम है, इसलिये सत्यकाम जाबाल आप मुझे कह सकते हैं । और मेरी मां ने कहा है कि जब वह युवा थी तो बहुत लोगों के साथ संपर्क में आयी । पता नहीं पिता कौन है । सत्यकाम वापस गया । उसने गुरु से कहा कि मेरी मां ने कहा है कि जब मैं युवा थी तब बहुत लोगों के संपर्क में आयी, पता नहीं कि तेरा पिता कौन है। इतना ही उसने कहा कि मेरा नाम सत्यकाम है और मां का नाम जाबाला है इसलिये आप मुझे सत्यकाम जाबाला कह सकते हैं ।

मैंने तो सुना है, कोई कह रहा था कि जबलपुर जाबाल के नाम पर ही निर्मित है । पता नहीं मुझे, मुझे कोई कह रहा था । हो सकता है । लेकिन गुरु ने कहा कि तब तुझे मैं ले लेता हूं, क्योंकि मैं मान लेता हूं कि तू निश्चित ही ब्राह्मण है, क्योंकि इतना सत्य सिर्फ ब्राह्मण ही बोल सकता है ।

ध्यान और नग्नता

ध्यानशिविर माउन्ट आबू में कैवल्य उपनिषद् प्रवचन माला में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दिया गया प्रवचन का एक अंश

ध्यान में क्या नग्नता उपयोगी है ?

सं. मा धर्म ज्योति

★

[ध्यान-शिविर, माउण्ट आबू (अप्रैल,७३) में भगवान श्री द्वारा दिया गया प्रश्नोत्तर प्रवचन]

कुछ मित्रों ने बहुत से प्रश्न पूछे हैं। सभी प्रश्न साधना के समय नग्न होने के सम्बन्ध में पूछे गये हैं। एक मित्र ने पूछा है कि शिविर में नग्नता पर रोक क्यों लगाई गई है ? क्या उसका उपयोग नहीं है ?

नग्नता का तो बहुत उपयोग है। सिर्फ नग्नता-नग्नता ही नहीं है। इसलिए तुम्हारे वस्त्रों के साथ तुम्हारी सभ्यता, तुम्हारी संस्कृति, तुम्हारी शिक्षा, तुम्हारे संस्कार सभी जुड़े हुए हैं। उन्हें उतार कर रखते ही वह सब भी जो तुम्हारे उपर चढ़ा है वस्त्रों की भांति, उतार कर रख दिया जा सकता है। नग्न होने का भय ही यही है कि मैं जैसा हूँ वैसा ही दिखाई न पड़ जाऊँ। बाह्य नग्नता तो प्रथम चरण है। वस्तुतः तो नग्न भीतर होना है कि मैं जैसा हूँ वैसा ही प्रगट हो जाऊँ; कोई नकाब, कोई चदरा, कोई मुखौटा कोई ऊपर का आवरण, जो झूठा है मेरे ऊपर न रहे। लेकिन मनुष्य क्योंकि बाहर ही जीता है इसलिए बाहर की नग्नता भी भीतर की नग्नता की तरफ सहयोगी होती है। नग्न होने में भय भी लगता है क्योंकि वस्त्रों ने तुम्हें वह रूप दिया है, जो तुम्हारे शरीर पर नहीं है। वस्त्रों ने तुम्हें ढांक रखा है, वस्त्रों ने तुम्हें छिपा रखा है, दूसरों की आँखों से, वस्त्रों के कारण तुम बच जाते हो।

नग्न खड़े होने का अर्थ है 'मैं जैसा हूँ—भला-बुरा, सुन्दर-असुन्दर वैसा प्रकट हूँ और अपने को छिपाता नहीं।' वह एक प्रतीक है और सुबह के ध्यान में, दूसरे चरण में, (ध्यान-शिविर में सुबह के प्रवचन के बाद भगवान

श्री सक्रिय ध्यान करवाते हैं जिस में ध्यान के चार चरण होते हैं। (१) तीव्र साँस की भीतर चोट करना (२) चित्त में छिपे विकारों-तनावों का रेचन करना (३) हू-हू का सतत मंत्र उच्चारण करना व (४) विश्राम में प्रवेश करना।) जब कि मैं तुमसे कहता हूँ कि जो भी तुम्हारे भीतर हो उसे प्रकट कर लो, तो स्वभावतः वस्त्रों का फेंक देने का ख्याल भी पैदा होता है। और वस्त्रों को जो उतार कर रख देता है, उसे दूसरे चरण में, अपनी विक्षिप्तता को प्रकट करने में ज्यादा आसानी हो जाती है। क्योंकि जो नग्न होने को राजी हो गया, उसे अब दूसरे की चिन्ता नहीं है। अब वह चीख भी सकता है। चिल्ला भी सकता है। नाच भी सकता है। दूसरे की चिन्ता वस्त्रों के साथ ही जैसे उतर गयी। दूसरे क्या कहेंगे, जिस को इस बात का भय है, वह वस्त्र भी नहीं उतार पायेगा।

सहयोगी है कि वस्त्रों को उतार कर रख कर ही सुबह के ध्यान में प्रवेश किया जाए। लेकिन कुछ साधक इतना साहस नहीं भी कर पाते तो बीच में भी दूसरे चरण में उनको ऐसा ख्याल आ सकता है कि वस्त्र अलग कर दें, तब भी वस्त्रों को अलग कर देना उपयोगी है। ये उपयोगिता अगर वस्त्र सिर्फ वस्त्र ही होते तो न होती, वस्त्रो के साथ बहुत कुछ जुड़ा है। जब तुम बच्चे की भाँति पैदा हुए थे, तो नग्न थे, जब भी तुम पुनः नग्न खड़े हो जाते हो, तुम अपने बचपन में वापिस लौट जाते हो।

वस्त्र तुम पर आरोपित किये गये, जिस दिन से तुम्हारे ऊपर वस्त्र आरोपित किये गये, उसी दिन से तुम्हें शरीर का बोध हुआ। उसी दिन से शरीर में कुछ पाप है। शरीर में कुछ छिपाने योग्य है। शरीर में कुछ ढाँकने योग्य है। शरीर में कुछ बुरा है, ये सारे भाव पैदा हुए। छोटे बच्चों को उसके माँ-बाप अगर वह नग्न बाहर आ जाये, तो डाँटेंगे, डपटेंगे। तो शरीर के प्रति एक निन्दा का भाव वस्त्रों के साथ ही पैदा हुआ। शरीर में कुछ बुरा है। विशेष कर जननेन्द्रियाँ बुरी हैं, छिपाने योग्य हैं, उसके साथ ही तुम्हारा शरीर भी दो हिस्सों में बँट गया। नीचे का शरीर कुछ बुरा, ऊपर का शरीर कुछ अच्छा, ये जो विभाजन हैं शरीर के भीतर, उसने तुम्हारी जीवन चेतना को भी दो खण्डों में बाँट दिया। आमतौर से लोग अपने सिर को ही अपना मानते हैं। बाकी शरीर को अपना नहीं मानते हैं। बहुत से लोग तो ऊपर के हिस्से को अपना मानते हैं, बाकी नीचे के हिस्से को ऐसा मानते हैं कि मजबूरी है। इस से तुम्हारे भीतर की जीवन ऊर्जा खंडित हो गयी है।

बच्चे के भीतर जीवन ऊर्जा अखंड होती है। उसका वर्तुल होता है। तुम्हारे भीतर वह वर्तुल नहीं है। लेकिन जिस क्षण तुम साहस करते हो और वस्त्रों को उतार कर रख देते हो, उसी क्षण वस्त्र पहनने के दिन से, वस्त्र जबरदस्ती पहनाये जाने के दिन से अब तक तुम्हारे चित्त पर जो शरीर के संबन्ध में निन्दा के भाव थे, वे भी हट जाते हैं। तुम्हें ख्याल ही न होगा कि हम इतने वस्त्रों में रहते हैं कि धीरे धीरे हमें खुद भी भूल गया है कि वस्त्रों के बिना हमारा शरीर क्या है।

वस्त्रों में हम एक कैद की तरह हैं, वस्त्र हटते ही हम मुक्त हो जाते हैं। पशु पक्षियों की तरह मुक्त हो जाते हैं। उस मुक्तता का उपयोग किया जा सकता है। इसलिए उपयोगिता तो बहुत है। लेकिन इस शिबिर में मजबूरी थी। मजबूरी ऐसी थी कि या तो शिबिर हो तो नग्नता की सुविधा न हो सकेगी, नग्नता की सुविधा करनी हो, तो शिबिर न हो सकेगा। तो इन दोनों में जो कम बुराई थी, वही चुन लेना उचित समझी गयी।

क्योंकि राजस्थान सरकार ने केवल दो दिन पहले खबर भेज दी कि वे अपना कोई मैदान, अपनी कोई संस्था, अपना कोई भवन नहीं दे सकेंगे। दो दिन पहले कोई भी व्यवस्था होनी मुश्किल थी और साधक सारी दुनिया से आ चुके थे। भारत के साधक तो आनेवाले थे, भारत के बाहर के साधक आ चुके थे। और कोई उपाय नहीं था और सरकार को इतना तो हक है ही कि वे जमीन के लिए इंकार कर दे, कि वहाँ नग्न कोई नहीं हो सकेगा।

उसके हुक्म में भी कोई बुराई नहीं है। जमीन उनकी है। हमारे पास अपनी कोई जमीन नहीं है। यहाँ इस पैलेस होटल में, जहाँ व्यवस्था की गई है, होटल व्यवस्थापकों की भी मजबूरी है। वे भी साहस नहीं जुटा सकते कि नग्न होने का मौका दें, क्योंकि उनके लिए सवाल व्यवसाय का है। तो इसलिए मजबूरी थी कि सुबह की नग्नता पर प्रतिबन्ध लगा देना पड़ा। लेकिन इससे आप ये न समझें कि हमने कोई साधना की पद्धति बदल दी। और इससे आप ये भी न समझें कि सरकार के सामने कोई हम झुक गये (तालियाँ)। ये सारी बातें नहीं हैं। न तो कोई झुकने का सवाल है, न कोई व्यवस्था बदलने की बात है।

सरकार ने हमें एक सुविधा ही दी और उससे लाभ ही होगा कि हम अपनी ही व्यवस्था शीघ्र कर पायेंगे जहाँ किसी का प्रतिबन्ध न हो—(तालियाँ) सरकार की अपनी मजबूरियाँ हैं। उसके ऊपर अपने दबाव हैं समाज के, सरकारों

के, समूह के; लेकिन हमारी निजी व्यवस्था हो तो कोई दबाव डाला नहीं जा सकता। वह हमारी निजी व्यवस्था होगी। उसके भीतर जो नग्न होना चाहते हैं, हो सकते हैं, वह कोई पब्लिक, कोई सार्वजनिक जगह नहीं होगी।

यह होटल है, सार्वजनिक जगह नहीं है। और लोग भी आ सकते हैं। तो जहाँ और लोग भी आ सकते हैं, वहाँ और लोगों का ध्यान रखना भी जरूरी है। और फिर जीवन को बदलने की जो भी प्रक्रियाएँ हैं, वे आम तौर से हमेशा ही समूह के विपरीत पड़ जाती हैं। नग्नता का ही सवाल नहीं है, नग्नता तो केवल प्रतीक है।

हम जो भी कर रहे हैं, वह समूह की धारणाओं के प्रतिकूल पड़ेगा ही। क्योंकि समूह जीता है अंधे की भाँति, बिना सोचे समझे। समूह जीता है परम्परा की लीक पर। जो परम्परा कहती है उसे ठीक मानता है, चाहे उसे ठीक मानने के कारण उसे कितना ही दुख झेलना पड़ता हो। उसे ख्याल भी नहीं होता कि मेरी मान्यताएँ ही मेरे दुख का कारण हैं। जो लोग भी जीवन में क्रान्ति करने को उत्सुक हैं, उन्हें समूह के धारणाओं के पार तो उठना ही पड़ता है। संन्यास का यही अर्थ है।

संन्यास का अर्थ समाज को छोड़ना नहीं है। क्योंकि समाज को तो छोड़ा जा नहीं सकता। संन्यास का अर्थ है, समाज की धारणाओं के पार उठना। समाज जिसको ठीक समझता है, अगर वह अनुभव से ठीक न मालूम पड़े तो उस से भिन्न की खोज करना।

लेकिन फिर भी बुद्धिमान व्यक्ति को यह ध्यान रखना जरूरी है कि जिनके बीच हम जीते हैं, उनकी मान्यताएँ, उनकी धारणाएँ, हम अपने लिए तो छोड़ सकते हैं लेकिन उनकी धारणाओ को हम तोड़ें, वह उचित नहीं है। हम अपने लिए उनकी धारणाएँ तोड़ सकते हैं, हम धारणाओं से मुक्त हो सकते हैं, वह हमारी निजी स्वतन्त्रता है। लेकिन मैं आपसे नहीं कहूँगा कि आप सड़क पर जाकर नग्न खड़े हो जायें, क्योंकि सड़क आप की नहीं है और सड़क के आस-पास रहनेवाले लोग हैं, उनको किसी भी बात से दुख हो, ऐसा कोई भी करना उचित नहीं है। लेकिन मैं सड़क के लोगों से भी ये कहना चाहता हूँ कि उनका भी यह हक नहीं है कि एकान्त निर्जन में, अपनी व्यवस्था के भीतर कोई नग्न खड़ा हो तो, उसमें वे अड़चन पैदा करें (तालियाँ)।

व्यक्ति की स्वतन्त्रता का मूल्य होना जरूरी है। लेकिन व्यक्ति की स्वतन्त्रता का कभी भी यह अर्थ नहीं है कि वह स्वतन्त्रता स्वछन्दता हो जाए। तो अगर मैंने कहा भी है कि सुबह के ध्यान में तुम नग्न हो सकते हो, तो

वह तुम्हें कोई नग्न होने की छूट नहीं दे दी है कि तुम कहीं भी नग्न हो सकते हो। और अगर तुम कहीं भी नग्न होना चाहो तो उसका अर्थ ही यह हुआ कि तुम्हें ध्यान में रस नहीं है। तुम्हें नग्नता में रस है। वह रोग है। फिर तो वह रोग हो गया। उल्टा रोग हो गया।

कोई वस्त्रों के दिवाने हैं, तुम नग्नता के दिवाने हो गए, उसमें कुछ फर्क न रहा। नासमझी उल्टी हो गई। तुम शीर्षासन करके खड़े हो गये। कोई पागल है। वह कहता है वस्त्र उतारने ही नहीं है चाहे कुछ भी हो जाए।

मैंने एक ईसाई साध्वी के संबन्ध में पढ़ा है कि वह अपने स्नान गृह में भी वस्त्र पहन कर ही स्नान करती थी। तो उसकी साथियों-संगियों ने कहा कि तू बिलकुल पागल है। स्नान गृह में तो तेरे अतिरिक्त कोई होता नहीं। तो वहाँ कपड़े पहने स्नान करने का क्या अर्थ है, स्नान का तो मजा ही चला गया। तो उस साध्वी ने कहा, जब से मैंने बाईबल में यह पढ़ा है कि परमात्मा तुम्हें सब जगह देख रहा है, तब से मैं बाथरूम में भी नग्न नहीं हो पाती।

यह एक पागलपन है। अगर परमात्मा सभी जगह देख रहा है तो कपड़ों के भीतर नहीं देख सकता? उसे कपड़े क्या अड़चन देंगे जब दीवाल अड़चन नहीं दे रही। तो कपड़े क्या अड़चन देंगे और परमात्मा भी कोई पीपिंग टाम है कि हर किसी के बाथरूम में झांक रहा है! तो रुग्ण है फिर तुम्हारा परमात्मा भी। आदमी खुद रुग्ण हो तो वह अपने परमात्मा को भी रुग्ण कर लेता है। तुम्हारे रोग तुम्हारे देवी देवताओं पर हावी हो जाते हैं, क्योंकि तुम्हारे ईश्वर की धारणा भी तुम्हीं तो निर्मित करते हो। अगर घोड़े ईश्वर की धारणा बनाये तो उसका चेहरा आदमी जैसा नहीं बनायेंगे—घोड़े जैसा ही बनायेंगे। अगर नीग्रो ईश्वर बनाते हैं तो उसे काला ही चित्रित करते हैं। उनके ईश्वर के ओंठ नीग्रो के ओंठ होते हैं। नीग्रो के बाल होते हैं। अगर चीनी ईश्वर को बनाते हैं तो उस के गाल की हड्डियाँ निकालते हैं। चपटी नाक रखते हैं। हम अपने ईश्वर को अपनी ही शक्ल में बनाते हैं।

तो हमारे जो रोग होते हैं, वह हमारे ईश्वर पर भी हावी हो जाते हैं। यह अब ये आदमी एक दूसरे के बाथरूम में झांक के जरूर देखना चाहते हैं। यह आदमी का रोग है। उनका ईश्वर भी वे ऐसा बना लेते हैं जो सब जगह झाँकता है। नग्न होने का मोह अगर पैदा हो जाए, तो वह भी रोग है, बीमारी है। ध्यान रहे आप का नग्न होना एक बात है और आप दूसरों को नग्न होकर

दिखाएँ, यह दूसरी बात है। इन दोनों में फर्क है। आपका नग्न होना सहज हो सकता है। लेकिन आप नग्न होकर दूसरे को दिखाने में उत्सुक हों कि कोई देखें तो मनोविज्ञान में वे उसे कहते हैं (Exhibitionist)। वे प्रदर्शनवादी जो हैं, वे रोगी हैं। इसको थोड़ा समझें। मनोविज्ञान दो तरह की बीमारियाँ बताता है इस संबंध में। एक को वह कहता है (Voyeur)। दूसरा नग्न हो, ऐसा देखने में रस लेना। एक को कहता है (Exhibitionist) हम नग्न हों और दूसरे देखें, इसमें रस लेना। यह दोनों बीमारियाँ हैं। ये दोनों सहज नहीं है।

पुरुष अक्सर (Voyeur) होते हैं। पुरुषों को जो बीमारी होती है वह झाँक कर स्त्रियों को देखने की होती है। स्त्रियाँ (Exhibitionist) होती हैं। उनकी जो बीमारी होती है वह यह होती है कि उनको कोई झाँक कर देखे। इसलिए स्त्रियाँ सारे उपाय करती हैं, ऐसे वस्त्र पहनती हैं, ऐसे गहनें लगाती हैं, ऐसा सारा इन्तजाम करती हैं कि कोई देखें। और पुरुष सारा इन्तजाम करते हैं कि किसी भाँति देखें। मगर ये दोनों रोग हैं। और आप जान के हैरान होंगे कि दोनों रोग ही वस्त्रों के कारण पैदा हुए हैं।

अगर आप एक आदिवासी समाज में चले जायें, जहाँ पुरुष स्त्रियाँ नग्न हैं, वहाँ न (Exhibitionist) होता है और न वहाँ (Voyeur) होते हैं। वहाँ न कोई देखने में उत्सुक होता है, क्योंकि देखने का बचा क्या है जिसमें उत्सुकता हो। सभी नग्न हैं। देखने को है क्या ? देखने की उत्सुकता तो जब कुछ छिपाया हो तब होती है। जब बातें खुली ही हों तो देखने का क्या है। तो आदिवासी समाज में जहाँ स्त्री पुरुष नग्न हैं—न तो कोई देखने में उत्सुक हैं, न कोई दिखाने में उत्सुक हैं। देखने दिखाने का रोग वस्त्रों के साथ पैदा हुआ है। यह रोग कितना बढ़ सकता है इसका हिसाब लगाना मुश्किल है।

कितने चित्र, कितनी कहानियाँ, कितनी फिल्में, कितनी पत्रिकाएँ सिर्फ इसलिए छपती और बिकती हैं कि उनमें नग्न चित्र छपते हैं। और सारी दुनिया की सरकार रुकावट लगाती है कि यह न हो, पर यह नहीं रुक पाता।

अंडर ग्राऊण्ड प्रेस हैं। भारी प्रचार चलता है, करोड़ों रुपयों का साहित्य नीचे बिकता है। कोई दुनिया की ताकत उस पर रोक नहीं लगा पाती बल्कि जितनी रोक लगायी जाती है, उतना सारा का सारा साहित्य ब्लैक मार्केट में

बिकता है। पर यह बड़ी आश्चर्य की बात है कि आदमी क्यों किसी को नग्न देखने में इतना उत्सुक है। आप जान कर चकित होंगे कि आप उन हिस्सों को देखने में उत्सुक होते हैं जो ढँके हैं। जो उघड़े हैं उनको देखने में उत्सुक नहीं हैं।

जिन लोगों ने वस्त्रों की ईजाद की, शायद आप सोचते होंगे, कि वे लोग काम वासना के बड़े विपरीत थे, इसलिए ईजाद की तो आप गलती में हैं। जिन्होंने वस्त्रों की ईजाद की उन्होंने आदमी को कामातुर बनाने का बड़ा भारी उपाय किया। क्योंकि जो अंग छिपा दिये गये हैं, उनमें बहुत रस पैदा हो गया। रुग्ण रस पैदा हो गया। इस रस का और कोई भी कारण नहीं है। शरीर सहज बात है, लेकिन उसको छिपा-छिपा के हमने निषेध कर कर के, बहुत रस पैदा कर लिया है। सारी दुनिया इस रस से ग्रसित हो गयी है।

आप दोनों बातें ख्याल में रखें। न तो दूसरे को नग्न देखने में उत्सुकता लेनी कोई समझदार व्यक्ति की बात है और न ही कोई उसे नग्न देखे, इसमें कोई रस लेना किसी समझदार व्यक्ति की बात है। ये दोनों रोग हैं। और ये दोनों रोग आप के वस्त्रों के साथ ही रख दिये जाने चाहिए, तो ही आपकी नग्नता में अध्यात्म प्रविष्ट होता है। तो ही आप की नग्नता अश्लील नहीं रह जाती; लेकिन यह तो आपकी बात है।

समाज इसके लिए राजी होगा, जरूरी नहीं है क्योंकि समाज तो उन्हीं रुग्ण बातों से भरा हुआ पड़ा है। अखबार राजी होंगे ये सवाल नहीं है। अखबार छापनेवाले पत्रकार, वे सब इन्हीं रुग्ण बातों से भरे पड़े हैं। उनकी भी तकलीफ वही है। उनकी भी अड़चन वही है। सरकार राजी हो जायेगी ऐसा नहीं क्योंकि सरकार के पदों पर जो लोग बैठे हैं, उन्हें कोई अध्यात्म की जरा सी झलक भी होती तो वे वहाँ नहीं होते। इसलिए वे कोई राजी हो जायेंगे, यह सवाल नहीं है। उनको राजी करने की कोई जरूरत भी नहीं है, कोई प्रयोजन भी नहीं है। उनकी तरफ ध्यान भी देने की जरूरत नहीं है, कि वे क्या कर रहे हैं। लेकिन इतना तो तय है कि वे बाधा और अड़चन डाल सकते हैं। लेकिन बाधा और अड़चन वे तभी डाल सकते हैं जब आप भी नग्नता को रोग की तरह पकड़ लें। नहीं तो वे भी बाधा और अड़चन नहीं डाल सकते।

यह हमारी निजी साधना की बात है और निजी स्थल पर है। जैन मुनि सड़क पर नग्न मैं तो पक्ष में नहीं हूँ इस बात के भी कि

निकले। क्योंकि सड़क निकलनेवाले की ही नहीं है—सड़क पर जो लोग रहते हैं उनकी भी है। जिनको दिखाई पड़ता है, उनकी भी है, अगर वे नहीं देखना चाहते हैं तो उनकी आँखों पर हमला करना उचित नहीं है। वे ठीक हैं या गलत, ये सवाल नहीं है, लेकिन आँख मेरी है, और मैं आपको नग्न देखना नहीं चाहता हूँ तो आप को ऐसी जगह खड़े नहीं होना चाहिये, जहाँ से आप मुझे नग्न दिखाई पड़ें। और आप ऐसी जगह खड़े होते हैं तो उसका मतलब यह है कि आप को नग्न होने में रस कम है, कोई आपको नग्न देखे इसमें ज्यादा रस है। तब तो बात ही व्यर्थ हो गयी।

तब तो यह हुआ कि हम एक रोग को छोड़कर दूसरे रोग में पड़ गये। कुएँ से बचे तो खाई में गिर गये। मैं कोई नग्नतावाद का प्रचारक नहीं हूँ। लेकिन नग्नता का एक उपयोग हो सकता है साधना में, उसमें जरूर मेरी सहमति है। लेकिन समाज का ध्यान रखना सदा ही जरूरी है। इसलिए नहीं कि आप समाज से डरते हैं। डर का कोई सवाल ही नहीं है।

लेकिन ये तो ऐसा ही हुआ, जैसे कोई बस हार्न बजा रही हो, और आप सामने ही खड़े रहे कि हम डरते हैं थोड़े जो रास्ते से हटें तो आप पागल हैं। हार्न बज रहा हो और कोई बस आ रही हो तो कोई डर की वजह से थोड़े ही हटता है, कि जो हट जाय उसको आप कहेंगे कि डरपोक है। क्योंकि जब बस आ रही थी, आप हटे क्यों? जब हार्न बज रहा था तब खड़े रहना तो कोई पागल होता तो खड़ा रहता। जीवन में झुकने की कोई जरूरत नहीं है; लेकिन जीवन में व्यर्थ अकड़े रहने की भी कोई जरूरत नहीं है। और दोनों के बीच मार्ग खोज लेना जरूरी है। इसलिए यहाँ जो एक ही उपाय था वह, यह कि अगर शिबिर हो तो नग्नता पर रोक लगानी जरूरी थी, नहीं तो शिबिर नहीं हो सकता था। दोनों में यही उचित पाया कि नग्नता पर प्रतिबन्ध लगा देना उचित होगा। थोड़ी बाधा तो पड़ेगी लेकिन इस बाधा से इतना नुकसान नहीं होगा, जितना शिबिर के न होने से होता। और मैं किसी भी मामले में अन्धा नहीं हूँ। और किसी भी मामले में मुझे किसी तरह का पागलपन नहीं है। जो उचित हो, और जो सुगम हो, और जिस भाँति अधिक लोगों को लाभ हो सके, सदा उस पर ही विचार कर लेना उचित है।

अनूठा आदर्श द्रौपदी

प्रथम गीता ज्ञान यज्ञ, अहमदाबाद में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दिया गया प्रवचन का एक अंश

एक सुबह एक मित्र आये। उन्होंने एक बहुत बढ़िया सवाल उठाया। मैं तो चला गया, शायद परसों मैंने कहीं कहा कि एक छोटें-ने मजाक से महाभारत पैदा हुआ। एक छोटे-से व्यंग से द्रौपदी के, महाभारत पैदा हुआ। छोटा-सा व्यंग द्रौपदी का ही, दुर्योधन के मन में तीर की तरह चुभ गया और द्रौपदी नग्न की गयी, ऐंसा मैंने कहा। मैं तो चला गया। उस मित्र के मन में बहुत तूफान आ गया होगा। हमारे मन भी तो बहुत छोटे-छोटे प्यालियों जैसे हैं, जिनमें बहुत छोटे से हवा के झोंके से तूफान आ जाता है-- चाय की प्याली से ज्यादा नहीं है हमारा मन! तूफान आ गया होगा।

मैं तो चला गया, तो वे मंच पर चढ़ आये होंगे। उन्होंने कहा, 'आ खोटी वात छे।' यह बिलकुल झूठी बात है। द्रौपदी कभी नग्न नहीं की गयी।

द्रौपदो पूरी तरह नग्न की गयी, हुई नहीं, यह बात बिलकुल दूसरी बात है। करने वालों ने कोई कोर-कसर न छोड़ी। करने वालों ने सारी ताकत लगा दी, लेकिन फल आया नहीं। किये हुए के अनुकूल नहीं आया फल, यह दूसरी बात है। असल में जो द्रौपदी को नग्न करना चाहते थे, उन्होंने क्या रख छोड़ा था? उनकी तरफ से कोई कोर-कसर न थी। लेकिन हम सभी कर्म करने वालों को, अज्ञात भी बीच में उतर आता है, इसका कभी कोई पता नहीं है। वह जो कृष्ण की कथा है, वह अज्ञात के उतरने की कथा है। अज्ञात के भी हाथ हैं, जो हमे दिखायी नहीं पड़ते।

हम ही नहीं हैं, इस पृथ्वी पर। मैं अकेला नहीं हूं। मेरी अकेली आकांक्षा नहीं है, अनन्त आकांक्षाएं हैं। और अनन्त की भी आकांक्षाएं हैं। और उन सब के गणित पर अंततः तय होगा कि क्या हुआ। अकेला दुर्योधन ही नहीं है नग्न करने में, द्रौपदी का भी तो अस्तीत्व है। अन्याय होगा यह कि द्रौपदी भरी सभा में जबरदस्ती नग्न की जाय। उसके पास भी चेतना है और व्यक्ति है। उसके पास भी संकल्प है। साधारण स्त्री नहीं है द्रौपदा। सच तो यह है कि द्रौपदी के मुकाबले की स्त्री पूरे विश्व के इतिहास में दूसरी नहीं है।

कठिन लगेगी बात, क्योंकि याद आती है अन्य श्रेष्ठ महिलाओं की। और भी बहुत यादें हैं। फिर भी मैं कहता हूं, द्रौपदी का कोई मुकाबला नहीं। द्रौपदी अद्वितीय है। उसमें क्लियोपेट्रा का सौन्दर्य तो है ही, गार्गी का तर्क भी है। असल में पूरे महाभारत की धुरी द्रौपदी है। सारा युद्ध उसके आस-पास हुआ हैं।

लेकिन चूंकि कथाएं पुरुष लिखते हैं, इसलिए कथाओं में पुरुष-पात्र बहुत उभर कर दिखाई पड़ते हैं। असल में दुनिया की महाकथा स्त्री की धुरी के बिना नहीं चलती। सब महाकथाएं स्त्री की धुरी पर घटित होती हैं। वह बड़ी रामायण सीता की धुरी पर घटित हुई है। उसके केन्द्र में सीता हैं। राम और

रावण 'ट्राएंगल' के दो छोर हैं। धुरी पर सीता हैं।

कौरव और पाण्डव, यह पूरा महाभारत और यह सारा युद्ध द्रौपदी की धुरी पर घटा है। उस युग की और सारे युगों की सुन्दरतम स्त्री है वह। नहीं, आश्चर्य नहीं है कि दुर्योधन ने भी उसे चाहा हो। उसका अस्तित्व उसके प्रति चाह पैदा करने वाला था। दुर्योधन ने भी उसे चाहा है और फिर वह चली गयी अर्जुन के हाथ।

यह भी बड़े मजे की बात हैं कि द्रौपदी को पांच भाइयों में बांटना पड़ा। कहानी बड़ी सरल है, उतनी सरल घटना नहीं हो सकती। कहानी तो इतनी ही सरल है कि अर्जुन ने आकर बाहर से कहा कि मां, देखो हम क्या ले आये हैं? और मां ने कहा, जो ले आये हो, वह पांचों भाई बांट लो। लेकिन इतनी सरल घटना हो नहीं सकती। क्योंकि जब बाद में मां को भी पता चला होगा कि यह मामला वस्तु का नहीं, स्त्री का है! वह कैसे बांटी जा सकती है? तो कौन-सी कठिनाई थी कि कुन्ती कह देती कि भूल हुई, मुझे क्या पता कि तुम पत्नी ले आये हो।

नहीं, लेकिन मैं जानता हूं कि जो संघर्ष दुर्योधन और अर्जुन के बीच होता, वह संघर्ष पांच भाइयों के बीच भी हो सकता था। द्रौपदी ऐसी थी, वह पांच भाई भी कट-मर सकते थे उसके लिए। उसे बांट देना ही सुगमतम राजनीति थी। वह घर भी कट सकता था। वह महायुद्ध, जो पीछे कौरवों-पाण्डवों में हुआ, वह पाण्डवों-पाण्डवो में भी हो सकता था। इसलिए कहानी मेरे लिए उतनी सरल नहीं है। कहानी बहुत प्रतिकात्मक और गहरी है। वह यह खबर देती है कि स्त्री वह ऐसी थी कि पांच भाई भी लड़ जाते। इतनी गुणी थी, साधारण नहीं थी, असाधारण थी। उसको नग्न करना आसान बात न थी। आग से खेलना था। तो अकेला दुर्योधन नहीं है कि नग्न कर लेगा। द्रौपदी भी है। और ध्यान रहे, बहुत बातें हैं इसमें, जो ख्याल में ले लेने जैसी हैं।

जब तक कोई स्त्री स्वयं नग्न न होना चाहे, तब तक इस जगत् में कोई पुरुष किसी स्त्री को नग्न नहीं कर सकता। कर पाता हैं, वस्त्र उतार भी ले तो भी नग्न नहीं कर सकता है। नग्न होना बड़ी घटना है--वस्त्र उतरने, निर्वस्त्र होने से नग्न होना बहुत भिन्न घटना है। निर्वस्त्र करना बहुत कठिन बात नहीं है, कोई भी कर सकता है, लेकिन नग्न करना बहुत दूसरी बात है। नग्न तो कोई स्त्री तभी होती है, जब वह किसी के प्रति खुलती है स्वयं, अन्यथा नहीं होती। वह ढंकी ही रह जाती है। उसके वस्त्र छीने जा सकते हैं, लेकिन वस्त्र छीनना स्त्री को नग्न करना नहीं हैं।

द्रौपदी जैसी स्त्री को नहीं पा सका दुर्योधन। उसके व्यंग तीखे पड़ गये उसके मन पर। बड़ा हारा हुआ है। हारा हुआ व्यक्ति--जैसे कि क्रोध में आयी

हुई बिल्लियां खम्भे नोचने लगती हैं–वैसा करने लगता है। और स्त्री के सामने जब भी पुरुष हारता है, इससे बड़ी हार पुरुष की कभी नहीं होती। पुरुष, पुरुष से लड़ ले, तो साधारण हार जीत होती है। लेकिन पुरुष जब स्त्री से हारता है किसी क्षण मे, तो इससे बड़ी कोई हार नहीं होती। दुर्योधन उन दिनों से नग्न करने का जितना आयोजन करके बैठा है वह सारा आयोजन भी हारे हुए पुरुष-मन का है।

उस तरफ जो स्त्री खड़ी है हंसने वाली, वह कोई साधारण स्त्री नहीं है। उसका भी अपना संकल्प है, अपना 'विल' है। उसकी भी अपनी सामर्थ्य है, उसकी भी अपनी श्रद्धा है। उसका भी अपना होना है। उसकी उस श्रद्धा में, वह जो कथा है, वह कथा तो काव्य है कि कृष्ण उसकी साड़ी को बढ़ाये चले जाते हैं। लेकिन मतलब सिर्फ इतना है कि जिसके पास अपना संकल्प है, उसे परमात्मा का सारा संकल्प तत्काल उपलब्ध हो जाता है। तो अगर परमात्मा के हाथ उसको मिल जाते हैं, तो कोई आश्चर्य नहीं।

मैंने कहा, और मैं फिर से कहता हूं कि द्रौपदी नग्न की गयी, लेकिन हुई नहीं। नग्न करना बहुत आसान है, उसका हो जाना और बहुत बात है। बीच में अज्ञात विधि आ गई, बीच में अज्ञात कारण आ गये। दुर्योधन ने जो चाहा, वह हुआ नहीं। कर्म का अधिकार था, फल का अधिकार नहीं था। यह द्रौपदी बहुत अनूठी है।

पूरा युद्ध हो गया है। भीष्म पड़े हैं शैय्या पर––बाणों की शैय्या पर। और कृष्ण कहते हैं, पाण्डवों को––कि पूछ लो धर्म का राज। और द्रौपदी हंसती है। उसकी हंसी पूरे महाभारत पर छायी है। वह हंसती है कि इनसे पूछते हैं, धर्म का रहस्य! जब मैं नग्न की जा रही थी, तब ये सिर झुकाये बैठे थे। उसका व्यंग बहुत गहरा है। वह इसलिए बहुत असाधारण है। काश! हिन्दुस्तान की स्त्रीयों ने द्रौपदी को आदर्श बनाया होता, तो हिन्दुस्तान को स्त्री की शान ही और होती।

लेकिन नहीं, द्रौपदी खो गयी। उसका कोई पता नहीं। खो गयी। एक तो पांच पतियों की पत्नी है, इसलिए मन को पीड़ा होती है। लेकिन एक पति की पत्नी होना कितना मुश्किल है, इसका पता नहीं है। जो पांच पतियों को निभा सकी है, वह साधारण स्त्री नहीं है। असाधारण है, 'सुपर ह्यूमन' है। द्रौपदी अति-मानवीय है, लेकिन 'सुपर ह्यूमन' के अर्थों में। पूरे भारत के इतिहास में द्रौपदी को सिर्फ एक आदमी ने प्रशंसा दी है, और एक ऐसे आदमी ने जो बिलकुल अनपेक्षित है। पूरे भारत के इतिहास में डॉक्टर राम मनोहर लोहिया को छोड़ कर किसी आदमी ने द्रौपदी को सम्मान नहीं दिया है। यह हैरानी की बात है। मेरा तो लोहिया से प्रेम इस बात से हो गया कि पांच हजार साल के इतिहास में एक आदमी तो हुआ, जो द्रौपदी को सबके ऊपर रखने को तैयार है।

काम-वासना की अन्तर्यात्रा

मेडय ब्लेवद्सकी की पुस्तक "समाधि के सप्तद्वार" पर आनन्द शिला शिविर में भगवान् श्री रजनीश द्वारा दी गई प्रवचन-माला का एक अंश

सारी वासनाओं के मूल में कामवासना है। वासना का रूप कोई भी हो, गहरे में खोजेंगे तो काम को ही पायेंगे। हिन्दुओं ने तो जगत के सृजन में ही काम को मूल माना है। सारी सृष्टि काम-वासना का ही फैलाव है। चाहे कोई धन चाहता हो, चाहे कोई पद चाहता हो; चाह मात्र अपने मौलिक रूप में कामना है, काम-वासना है। धन भी इसीलिये चाहा जाता है; पद भी इसीलिये चाहा जाता है। ये प्रकारान्तर से अलग-अलग द्वारों से एक ही वासना की तरफ ले जाते हैं।

तो जिसने काम-वासना पर विजय पा ली, उसने सभी वासनाओं पर विजय पा ली। काम-वासना क्या है?

अगर हम वैज्ञानिकों से पूछें, तो वे कहते हैं कि आदमी के जीवन में दो बातें बहुत आधारभूत हैं। एक तो जीवन बचना चाहता है, सरवाइव करना चाहता है। जीवन नष्ट नहीं होना चाहता है। जीवैषणा है कि मैं जीऊं अकारण; इसका कोई कारण नहीं है। अगर कोई आप से पूछे, आप क्यों जीना चाहते हैं, तो आप कोई कारण नहीं बता सकेंगे। जीना चाहते हैं, यह अकारण हैं, बस ऐसा है। यह वैसे ही अकारण है जैसे सौ डिग्री पर पानी भाप बन जाता है, नब्बे डिग्री पर बनने में क्या अड़चन थी, या एक सौ दस डिग्री पर बनता तो क्या हर्ज था, अगर हम वैज्ञानिक से पूछें कि हाइड्रोजन आक्सीजन से मिलकर ही पानी क्यों बनता है, तो कोई उत्तर नहीं है। बनता है; क्यों का कोई सवाल नहीं है। जो भी है, वह मिटना नहीं चाहता है। होने में ही बने रहने की कामना छिपी है।

इस कामना के दो रूप हो जाते हैं। आप होना चाहते हैं, रहना चाहते हैं, बचना चाहते हैं। अमरत्व की आकांक्षा है; न मिटें, ऐसा गहरे में छिपा है। इसलिए आदमी अपनी सब तरह से अपनी सुरक्षा करता है। लेकिन व्यक्ति की मृत्यु तो होगी। कितना ही उपाय हो, कितनी ही सुरक्षा हो, व्यक्ति मरेगा। क्योंकि व्यक्ति का जन्म होता है। लेकिन व्यक्ति के भीतर जो जीवन है, वह बच सकता है। आपकी लहर मरेगी, लेकिन आपके भीतर जो सागर है जीवन का वह बच सकता है। काम-वासना उसी जीवन के बचने की चेष्टा है। आप मिट जायेंगे, लेकिन आपके भीतर से जीवन निकल कर नये रूप ले लेगा। और उसके पहले कि आप मिटें, आपके भीतर जो जीवन की धारा छिपी है, वह नये शरीर खोज लेगी। आप खो जायेंगे, लेकिन आपके कुछ मौलिक अस्तित्व का हिस्सा, आपकी जीवन-धारा का कोई अंश आपके बच्चों में, बच्चों के बच्चों में यात्रा करता रहेगा।

काम-वासना जीवन को हर हालत में बचाने की आकांक्षा का हिस्सा है। ऐसा मनुष्य में ही है, ऐसा नहीं ; समस्त जीवन में है। वृक्ष भी अपने बीजों को सुरक्षित भूमि तक पहूंचाने की कोशिश करता है। अगर आप वृक्षों का अध्ययन करें, तो

चकित हो जाएंगे। बड़े वृक्ष अपने बीजों को अपने से दूर पहुंचाने की कोशिश करते हैं। क्योंकि अगर बीज वृक्ष के नीचे ही गिर जायें, तो बड़े वृक्ष के नीचे उनके अंकुरित होने का उपाय नहीं है; उसकी छाया में वे मर जायेंगे। आपने सेमल का फूल देखा है? आपने कभी सोचा न होगा कि बीज में सेमल की रुई क्यों चिपकी होती है! उस वृक्ष की यह कोशिश है कि रुई के कारण हवा के झोंके में बीज दूर चला जाए। वह नीचे गिरेगा, तो नष्ट हो जाएगा। बीज को दूर पहुंचाने की कोशिश है—वह जो सेमल की रुई है। बीज खुद न उड़ सकेगा, रुई के सहारे उड़ जाएगा; दूर गिरेगा कहीं जाकर जहाँ अंकुरित हो सकेगा। और इसलिये एक वृक्ष करोड़ों बीज पैदा करता है कि एक व्यर्थ चला जायेगा, दो व्यर्थ चले जायेंगे, लेकिन करोड़ों बीजों में से अगर एक भी अंकुरित हो गया तो जीवन पल्लवित होता रहेगा।

मैं एक मछली की जाति के संबंध में कभी पढ़ रहा था। उस मछली का जीवन बहुत थोड़ा है! लेकिन अपने जीवन में वह मछली कोई दस करोड़ अंडे देती है। दस करोड़ अंडे! और मछली के अंडों का जीवन बड़ा संकटपूर्ण है। दस करोड़ अंडों में से दो ही मछलियां पैदा हो पाती हैं। आदमी के भीतर भी इतने ही बीज पैदा होते हैं। एक पुरुष चार-पाँच अरब बच्चों को जन्म दे सकता है। एक संभोग में लाखों जीवाणु उपयोग में आते हैं, जो सभी जीवन बन सकते थे। लेकिन जीवन में आपके दस पांच बच्चे ज्यादा से ज्यादा पैदा हो पायेंगे।

जीवशास्त्री कहते हैं कि जीवन बचाने की आकांक्षा के कारण कोई भी अवसर खोना नहीं चाहता है और इतनी विपुलता से अपने को फैलाता है कि अगर हजारों-लाखों मर कर भी व्यर्थ चले जायें, तो भी जीवन बचा रहे।

जीवन की बचने की यह आकांक्षा ही आपको काम-वासना जैसी मालूम पड़ती है। यह गहरी से गहरी है। इससे ही आप जन्मे हैं। और इससे ही जीवन आपसे जनमने के लिये आतुर भी है। काम-वासना के द्वार से जीवन में आपने प्रवेश किया है। और इसके पहले कि आप की देह व्यर्थ हो जाये, वह जीवन, जिसने आप में आवास बनाया था, नये आवास बनाने की कोशिश करता है।

इसलिये काम-वासना इतनी उद्दाम है। कितना ही उपाय करें, वह मन को पकड़ लेती है। वह आपसे बड़ी मालूम पड़ती है। आपके सब संकल्प, ब्रह्मचर्य के नियम, आपकी सब कसमें, सब प्रतिज्ञाएं पड़ी रह जाती हैं। और काम-वासना जब वेग पकड़ती है, तब आप पाते हैं कि आविष्ट हो गये और कोई बड़ी धारा आपको खींचे लिये जा रही है और आप उसमें बहे जा रहे हैं। इतनी मौलिक है काम-वासना।

और समस्त अध्यात्म की खोज इस काम-वासना के रूपान्तरण में है। क्योंकि यह जो जीवन की धारा है, अगर यह बाहर की तरफ बहती रहे तो नयी देह, नये शरीर उससे पैदा होते रहेंगे और यही जीवन की धारा अगर अपने पर लौट आये तो आपका परम जीवन भी इसी जीवन-धारा से उपलब्ध हो जायेगा।

इस जीवन-धारा के दो उपयोग हैं : जैविक और आत्मिक। बायोलाजी के अर्थों में संतति और अध्यात्म के अर्थों में आत्मा। इससे शरीर भी पैदा हो सकते हैं अगर यह बाहर जाये और इससे आपकी आत्मा की किरण भी निखर के प्रगट हो सकती है अगर यह भीतर आये। यही धारा बाहर जाकर नये शरीर का जन्म बनती है और यही धारा भीतर जाकर आपका नया जन्म बनती है। जिस व्यक्ति की धारा उर्ध्वमुखी हो जाती है, अन्तर्मुखी हो जाती है, वह द्विज हो जाता है, उसका नया जन्म हो गया। एक जन्म तो मिलता है मां-बाप से, वह शरीर का जन्म है। एक और जन्म आपको स्वयं अपने को देना पड़ता है; वह आत्मा का जन्म है।

इसलिये समस्त धर्म काम-वासना के प्रति अति उत्सुक हैं। क्योंकि वही मूल शक्ति है, जिसका उपयोग किया जाना चाहिए। अगर आप संतति के निर्माण में ही लगे रहे, तो जिस शक्ति से आपका पुनर्जन्म हो सकता था और जिससे आप उसका अनुभव कर सकते थे जो अमृत है, उससे आप वंचित हो जाएंगे। तब अनेक-अनेक जन्मों में आप भटकते रह सकते हैं। जिस दिन यह धारा भीतर मुड़ जाएगी, उसी दिन देह में भटकना बन्द हो जाएगा। इसको हमने आवागमन से मुक्ति कहा है। और जब तक यह धारा बाहर ही चलती रहती है, तब तक आपको बाहर भटकना ही पड़ेगा।

अति कठिन है इस धारा को भीतर की तरफ मोड़ना। लेकिन यह असम्भव नहीं है। और कठिनाई भी नासमझी की वजह से है। समझपूर्वक इस धारा को भीतर ले जाया जा सकता है। जीवन की सभी शक्तियां समझपूर्वक काम में आ जाती हैं।

आज से पहले, इस सदी के पूर्व भी आकाश में बिजली चमकती थी; लेकिन वह आदमी के लिए सिर्फ भय का कारण थी। उससे डर पैदा होता था उसकी कड़क, उसकी चमक, कड़कड़ाहट छाती को डावांडोल कर जाती थी। आदमी सोचता था कि परमात्मा नाराज है और हम से कोई पाप, कोई भूल हुई है, इसलिए वह बिजली कड़का के हमे डरा रहे हैं। बिजली इन्द्र का बज्र, इन्द्र का शस्त्र समझी जाती थी। फिर हम बिजली को समझ पाए कि वह क्या है। हमने उस शक्ति के राज को समझ लिया। आज उसी बिजली से कोई भय नहीं रहा। आज वही बिजली, बंधी हुई, घर-घर में प्रकाश दे रही है। आज वही बिजली जीवन की सहयोगी हो गई है।

ज्ञान विजय है; अज्ञान पराजय है। अज्ञान में शक्ति से डर लगता है; ज्ञान में वही शक्ति सहयोगी और सेवक हो जाती है।

जैसे आकाश में कौंधती बिजली कभी हमे डराती थी, वैसे ही कौंधती काम-वासना की शक्ति भी हमें डराती है, भयभीत करती हैं। क्योंकि हम अभी भी उस सम्बन्ध में अज्ञानी हैं, उस भीतर की विद्युत के सम्बन्ध में हम अभी भी अज्ञानी है।

ऐसा नहीं हैं कि उसके सूत्र नहीं जान लिये गए हैं। और ऐसा भी नहीं है कि लोगों ने उस भीतर की विद्युत को नहीं बांध लिया। और ऐसा भी नहीं है कि उस विद्युत को बांध कर लोगों ने उस विद्युत से जगत में सेवा नहीं ले ली। जैसे बाहर की विद्युत को बांध कर हमने बाहर प्रकाश कर लिया, वैसे ही उस भीतर की विद्युत को बांध कर भी भीतर प्रकाश कर लिया गया है। लेकिन एक कठिनाई है

बाहर का विज्ञान सामूहिक सम्पत्ति बन जाता हैं; एक बार जान लिया कि बिजली को कैसे पैदा किया जाए, जान लिया गया कि बिजली से कैसे उपयोग लिया जाए, तो फिर हर आदमी को खोजना नहीं पड़ता है। सूत्र जाहिर हो गए; उसकी शिक्षा दी जा सकती है। तो हर आदमी को एडिसन होने की जरूरत नहीं है। फिर एक साधारण-सा इंजिनियर भी सभी काम कर देता है। वह कोई एडिसन नहीं है; उसने कुछ खोजा नहीं, उसको कोई बड़ा ज्ञान भी नहीं है। लेकिन उसे जानकारी है फिर एक टेकनीशियन भी, जो इंजीनियर भी नहीं है, बिजली का काम कर देता है। उसे कुछ भी पता नहीं है, बिजली क्या है, पर उसे इतना पता है कि उसका कैसे उपयोग किया जाए।

लेकिन भीतर के विज्ञान के साथ एक कठिनाई है। नियम खोज लिये जाए, तो भी वे सार्वजनिक नहीं हो पाते हैं। हो नहीं सकते हैं; उनका स्वभाव ऐसा है। बुद्ध को पता है, कृष्ण को पता है, महावीर को पता है कि भीतर की यह जो विद्युत-धारा है--काम-ऊर्जा या सेक्स एनर्जी--वह कैसे बांधी जाए, कैसे इसकी धारा बदली जाए, कैसे इसे बहाया जाए अपने अनुकूल, कैसे इससे भीतर प्रकाश पैदा किया जाए, कैसे भीतर की शक्ति में इसका उपयोग किया जाए, कैसे भीतर के जीवन को पाने के लिए यह मार्ग बन जाए। सब इन्हें पता है। और वे कहते भी हैं। लेकिन फिर भी आप इंजीनियर या टेकनीशियन की तरह उसका उपयोग नहीं कर पाते हैं।

भीतर के विज्ञान के सम्बन्ध में एक मौलिक बात है कि फिर उसमें आपको स्वयं एडीसन बनना पड़ेगा, बुद्ध बनना पड़ेगा, क्राइस्ट बनना पड़ेगा। उसके पहले आप उसका उपयोग न कर सकेंगे। क्योंकि यह आपके भीतर की घटना है; मात्र

सूचना और जानकारी से कुछ भी न होगा। अनुभव ही मार्ग बनेगा। संसार के सम्बन्ध में सूचना काफी है; अध्यात्म के सम्बन्ध में अनुभव जरूरी है। संसार के सम्बन्ध में जो भी हम जानते है, उसकी प्रयोगशालाए बाहर हो सकती हैं। अध्यात्म के सम्बन्ध आप ही प्रयोगशाला हैं।

और भी जटिलता है। आप ही हैं प्रयोग करने वाले, आप ही हैं प्रयोगशाला, आप ही हैं उपकरण प्रयोग के, आप ही हैं शक्ति जिस पर प्रयोग होना है और आप ही हैं जो अंततः इस प्रयोग से रूपांतरित होंगे। वहां आपके अतिरिक्त और कोई भी नहीं है। इसलिये जटिलता बढ़ जाती है।

जैसे एक मूर्तिकार मूर्ति बनाता हो, तो पत्थर अलग होता है, जिस पर मूर्ति बनानी है; छेनी अलग होती है जिससे मूर्ति बनानी है, मूर्तिकार अलग होता है जिसको मूर्ति बनानी है और खरीददार अलग होता है जो मूर्ति खरीदेगा। लेकिन अध्यात्म की इस मूर्तिकला में आप ही सब कुछ हैं। आप ही हैं पत्थर जिसकी मूर्ति बननी हैं; आप ही हैं छेनी जिससे मूर्ति बनायी जानी है; आप ही हैं कलाकार जिसको मूर्ति बनानी है और आप ही हैं, ग्राहक, खरीददार। वहां सब कुछ आप हैं। इसेलिये जटिलता बढ़ जाती है, उलझन गहरी हो जाती है।

लेकिन क्योंकि मूर्तियां बन गई हैं, तो ही हमने बुद्धों को देखा और जाना है। और जो एक में हो सकता है वह सभी में हो सकता है। इस सूत्र को हम इस दृष्टि से समझने की कोशिश करें और खयाल रखें कि काम-ऊर्जा की समझ ही उसकी विजय है। लड़ने से नहीं जीतेंगे; जानने से जीतेंगे। लड़ते नासमझ हैं। समझदार लड़ते नहीं हैं, वे समझने की कोशिश करते हैं। जितने जान लेते हैं, वे उतने ही मालिक हो जाते हैं।

बेकन ने कहा है, ज्ञान शक्ति है। विज्ञान के लिए उसने यह कहा था। लेकिन अध्यात्म के लिए भी सत्य है। ज्ञान शक्ति है।

जिस शक्ति को आप जानते नहीं हैं, उससे आप परेशान होंगे। और अनजान में जो भी करेंगे, उससे और जटिलताएं बढ़ जायेंगी। ऐसा अदमी खोजना मुश्किल है, जो काम-ऊर्जा के सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ न करता हो। बिलकुल मुश्किल है। बुरे से बुरा आदमी भी, अनैतिक आदमी भी, कामुक आदमी भी काम-वासना के सम्बन्ध में कुछ-न-कुछ करता रहता है; रोकने की कोशिश करता है; संभालने की कोशिश करता है। इस सारी कोशिश में वासना विकृत हो जाती है; सुधरती नहीं है, बदलती नहीं है, और कुरूप हो जाती है।

सारी दुनिया कुरूप काम–वासना से भरी है। हजारों रूपों में काम–वासना विकृत रोगों का रूप ले लेती है। ये नासमझों द्वारा किए येग काम हैं। यह ऐसा

है, जैसे कोई बिजली के सम्बन्ध में कुछ न जानता हो और वह यदि बिजली के किसी उपकरण को सुधारने में लग जाए तो उससे आशा है कि और बिगाड़ देगा।

अच्छा हो, छुओ ही मत जब तक समझ न लो। ठीक समझ कर ही भीतर चलना; अन्यथा जिस शक्ति से आत्मा का जन्म हो सकता था, उससे आत्मघात भी हो सकता है। और बहुत लोग आत्मघाती हो जाते हैं, अगर हम लोगों की मानसिक विकृतियों का अध्ययन करें, तो हम पायेंगे कि उनके मूल में काम-वासना के साथ किया गया अज्ञानपूर्ण कार्य। फ्रायड के गहरे अध्ययन ने यह बात जाहिर कर दी है कि आदमी के मन की बीमारियों में सौ में निन्नानबे के मामले में काम वासना की विकृति है। उस ऊर्जा के साथ कभी भूल हो जाती है और तब सब नष्ट हो जाता है। हजार तरह के पागलपन हैं, हजार तरह के मानसिक रोग हैं, हजार तरह की मानसिक चिन्ताए हैं, उनके रूप कुछ भी हो, उनके गहरे में काम–वासना होगी। और काम-वासना इसलिए उनके गहरे में होती है कि आपने कुछ करने कि कोशिश की है उस यंत्र के सम्बन्ध में जिसका आपको कोई भी पता नहीं है।

और काम–वासना जीवन का आधार है; इसलिए बहुत गहरे होने चाहिए उसकी जानकारी, उसकी समझ, उसका अनुभव। तीन बातें स्मरण रखें, फिर हम सूत्र में प्रवेश करें।

पहली बात, स्वाभाविक काम-वासना को अस्वाभाविक मत होने देना। जो स्वाभाविक है, उसे स्वीकार करना। अस्वीकार करने से वह अस्वाभाविक हो जाएगी। और उसे अस्वाभाविक करने से उसके विकृत, परवर्टेड रूप पैदा हो जाएगें स्वाभाविक काम वासना को बदलना आसान है; अस्वाभाविक को बदलना बहुत कठिन है। समझें इसे ऐसा कि एक पुरुष एक स्त्री में आकर्षित होता है; यह स्वाभाविक है। इस काम-वासना को बदलना आसान है। लेकिन सारी दुनिया में हीमोसेक्सुएलिटी है कि एक पुरुष एक पुरुष में उत्सुक हो जाता है, या एक स्त्री एक स्त्री में उत्सुक हो जाती है; इस काम-वासना को बदलना कठिन है। यह विकृत है, अस्वाभाविक है; इसकी बदलाहट बहुत मुश्किल है। हेटरोसेक्सुएलिटी, इतरलिंग कामुकता को बदलना आसान है, क्योंकि वह स्वाभाविक है, प्राकृतिक है। हीमोसेक्सुएलिटी, समलिंग कामुकता को बदलना अति कठीन है, क्योंकि हम अप्राकृतिक है।

इस तरह के हजार-हजार रूप आदमी को पकड़े हुये है। एक आदमी जिसे प्रेय करता है, वह उसको पास लेना चाहता है, निकट लेना चाहता है, यह स्वाभाविक है। इस स्वाभाविक वासना को बदलना आसान है लेकिन एक आदमी किसी को प्रेम नहीं करता है, किसी को निकट नहीं लेना चाहता है, लेकिन भीड़-भीड़के

में अगर स्त्री मिल जाये तो धक्का मार के नदारद हो जाता है, यह अस्वाभाविक है। इस आदमी की काम–वासना को बदलना बहुत मुश्किल है। यह विकृत है, यह स्वाभाविक नहीं है। जिससे प्रेम है, उसे निकट लेना स्वाभाविक है। लेकिन, जिससे प्रेम नहीं है, उसको भीड़ में धक्का मार कर चले जाना रोग है। इसकी बदलाहट जरा मुश्किल पड़ेगी। और इसकी बदलाहट के लिये अड़चने हो जाएगी।

लेकिन एक आदमी क्यों किसी स्त्री को भीड़ में धक्कामारने में उत्सुक हो जाता है ? शायद किसी स्त्री को पास लेने का जो मन था, उसे उसने दबा लिया है, रोक लिया है। वही दबा हुआ झरना कहीं से भी फूट कर बह रहा है। तो पहली बात तो यह खयाल रखना कि स्वाभाविक काम-वासना ठीक है। और उससे आगे की यात्रा सीधी है। अस्वाभाविक काम-वासना और खतरनाक है, उससे सावधान रहना, बचना।

दूसरी बात ख्याल रखना कि स्वाभाविक काम-वासना को सिर्फ भोगगा ही नहीं, भोग के साथ-साथ उस पर भी ध्यान करना। क्योंकि वासना में दंश नहीं है, मूर्च्छित वासना में दंश है। अगर आपको लगता है कि मन को काम पकड़ता है, तो भोग में उतरना, लेकिन होश पूर्वक उतरना। ध्यान रखना क्या हो रहा है, ध्यान रखना क्या मिल रहा है, ध्यान रखना कि किस सुख की, किस आनन्द की, किस शांति को उपलब्धि हो रही है। ध्यानपूर्वक भोग में उतरना, ताकि भोग के गहरे रहस्य आपके ध्यान में समाविष्ट हो जाएं। वही अपकी समझ बनेगी।

और तीसरी बात। इस बात को खोज जारी रखना कि जो सुख या शांति की झलक मिलती है, वह वस्तुतः काम-वासना के कारण मिलती है या कारण कोई और है। स्वाभाविक वासना हो, ध्यानपूर्वक वासना हो, तो यह तीसरी बात भी समझने में आपको ज्यादा देर नहीं लगेगी, और पता चल जाएगा कि काम-वासना के कारण सुख और आनन्द की प्रतीति नहीं होती है। इसको जो जानते हैं उन्होंने काक-तालीम न्याय कहा है। काकतालीम न्याय का मतलब होता है कि आप एक वृक्ष के नीचे बैठे है और एक कौए ने आवाज दी और कौए की आवाज के साथ संयोग की बात कि वृक्ष से एक फल टपक कर आपके पास गिर गया, तो आपने समझा कि कौए की आवाज के कारण फल गिरा। यह काकतालीम न्याय है। कोई कौए की आवाज से फल नहीं गिरा। कौए की आवाज से फल के गिरने का कोई अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है। लेकिन जटिलता और बढ़ जाएगी कि जब आप भी कौए की आवाज सुनें तभी अगर फल गिरे। तब बहुत मुश्किल हो जाएगी।

आपने सुनी होगी उस बुढ़िया औरत की कहानी, जिसके मुर्गे के बांग देने से रोज सुबह सूरज ऊगता था। एक दिन की बात हो तो संयोग भी मान लें। वर्षों

का अनुभव है कि जब भी मुर्गा बांग देता हैं, तब सूरज ऊगता है। स्वभावतः उस बूढ़ी औरत ने मान रखा था कि मेरा मुर्गा जिस दिन बांग न देगा, उस दिन सूरज न निकलेगा। गांव से उसका झगड़ा हो गया तो उसने कहा कि अच्छा ठहर, तुम्हें मैं मजा दिखाती हूं; मैं अपने मुर्गे को लेकर दूसरे गांव चली जाती हूं, तब तुम्हें पता चलेगा, जब अंधेरे में भटकोगे और तड़पोगे और जब सूरज नहीं ऊगेगा। वह बूढ़ी औरत अपने मुर्गे को लेकर दूसरे गांव में चली गई। और जब मुर्गे ने दूसरे गांव में बांग दी और सूरज ऊगा, तो उसने कहा, अब समझेंगे नासमझ लोग, उस गांव की क्या हालत हो रही होगी ? सूरज तो यहां ऊग गया। जहां मेरा मुर्गा, वहां सूरज को ऊगना होगा। यह काकतालीम न्याय है।

काम-वासना के सम्बन्ध में यही हो रहा है। काम-वासना से जो सुख मिलता है, उससे इतना ही सम्बन्ध है जितना मुर्गे की बांग में और सूरज के ऊगने में है। काम-वासना से सुख नहीं मिलता है; न मुर्गे की आवाज से सूरज ऊगता है। लेकिन किसी और गहरे कारण से सुख की प्रतीति होती है। उसका आपको पता हो जाए तो फिर यह भ्रान्ति टूट जाएगी कि मुर्गे की आवाज से सूरज ऊग रहा है। और फिर सूरज उगाने के लिए मुर्गे की आवाज पर निर्भर रहने की जरूरत नहीं है। फिर सूरज आपके मुर्गे की आवाज के बिना भी ऊग सकता है।

काम की तृप्ति में जो सुख मिलता है, उसका मौलिक कारण काम नहीं है, उसका मौलिक कारण ध्यान है, समाधि है। काम-वासना के शिखर पर एक क्षण को मन शून्य हो जाता है और इस शून्य होने के कारण आपको सुख की झलक मिलती हैं। शून्य क्यों हो जाता है ? आप काम–वासना में इतने तल्लीन हो जाते हैं, काम-कृत्य में और क्रीड़ा में इतने तल्लीन हो जाते हैं जितने आप किसी में तल्लीन नहीं होते, उस तल्लीनता के कारण मन शान्त हो जाता है और मन के शान्त होने के कारण सुख की झलक मिल जाती है।

अगर आप किसी और काम में भी इतने ही तल्लीन हो जाएं तो आप पर काम-वासना की पकड़ छूट जाएगी। इसलिए जो लोग स्रष्टा हैं, जो कुछ सृजन कर सकते हैं, उनको काम-वासनाएं ज्यादा नहीं पकड़ती हैं। इसलिए स्रष्टा पुरुषों के साथ स्त्रियां कभी प्रसन्न नहीं होती। सुकरात है, तो उनकी स्त्री सुकरात से प्रसन्न नहीं होती है। हो नहीं सकती। क्योंकि सुकरात इतना लीन हो जाता है दर्शन के चिन्तन में कि काम-वासना उसकी क्षीण हो गई है। उसी लीनता से उसे वह सुख मिल जाता है, जो काम-वासना से उसे मिलता हैं।

एक चित्रकार अपने चित्र बनाने में अगर लीन हो जाए, तो उसके मन को काम-वासना नहीं पकड़ती। एक मूर्तिकार अपनी मूर्ति को बनाने में लीन हो जाए,

तो उसकी काम–वासना क्षीण हो जाती है। इस क्षीण होने का कारण यह नहीं हैं कि वह कोई ब्रह्मचर्य साध रहा है। इसका कारण यह है कि उसका सूरज पुराने मुर्गे की बांग के बिना ऊगने लगा। वह जो क्षण आता था मौन का काम के द्वारा, अब वह मूर्ति के ही निर्माण करने में आने लगा। अगर आप अपने गीत में डूब जाए, अपने नृत्य में डूब जाएं, अपने ध्यान में डूब जाएं, तो आपको पता हो जाएगा कि सूरज के ऊगने का मुर्गे को बांग से कोई संबंध नहीं हैं। यह सूरज और तरह से भी ऊग सकता है।

ये तीन बातें खयाल रखें, स्वाभाविक हो काम, ध्यानपूर्वक हो काम और सतत यह खोज बनी रहे कि जो गहरे में शांति की प्रतीति होती है, वह काम–वासना के कारण होती है या कारण कोई और है जिसका हमें पता नहीं है। जिस दिन आपको वह कारण साफ हो जायेगा, उस दिन उस कारण का सीधा ही उपयोग किया जा सकता है। ध्यान, समाधि, योग–सब उसी कारण पर खड़े हैं।

योग ने उस कारण को खोज लिया है सीधा। इसलिये लोग कहते हैं कि जब तक आप ब्रह्मचर्य को उपलब्ध न होंगे, तब तक आप योगी न बन सकेंगे। और मैं कहता हूं कि जब तक आप योग को उपलब्ध न होंगे, ब्रह्मचर्य उपलब्ध नहीं होगा। इसलिये मैं ब्रह्मचर्य को योग की शर्त नहीं बनाता। ब्रह्मचर्य को मैं योग का परिणाम कहता हूं। इसलिये मैं आपसे नहीं कहता हूं कि ध्यान अगर आपको करना है, तो पहले ब्रह्मचर्य साधें। जो यह कहते हैं, उन्हें पता नहीं है कि वे क्या कह रहे हैं। मैं आपसे कहता हूं, आप ध्यान साधें, ब्रह्मचर्य की चिंता मत करें।

जिस दिन ध्यान में आपको काम-वासना से मिले सुख से गहन सुख का अनुभव होने लगेगा, उस दिन दुनिया की कोई भी ताकत आपको काम-वासना में ले जाने की सामर्थ्य नहीं रखेगी। दुनिया में महत्तर सुख के लिए छोटे आनंद छोड़े जा सकते हैं। लेकिन बड़े आनंद का कोई अनुभव होना चाहिये।

आपके हाथ में कंकड़ पत्थर हैं, मैं आपसे कहूं कि छोड़ दें, तो आप कहेंगे कि कुछ तो हैं हाथ में, कंकड़-पत्थर ही सही हाथ भरा है तो ही अच्छा लगता है, खाली हाथ में बेचैनी होगी। आप छोड़ने को राजी न होंगे। और कंकड़-पत्थर रंगीन हैं और हीरों का खयाल देते हैं। लेकिन अगर मैं एक हीरा आपके हाथ में रख दूं, तो आपको पता भी नहीं चलेगा कब आपके हाथ से कंकड़-पत्थर छूट गये और कब आपने हीरे पर मुट्ठी बांध ली।

ध्यान आपको उस हीरे को अपनी शुद्धता में दे देता है, काम–वासना में मुश्किल से जिसकी झलक और बड़ी अशुद्ध झलक कभी–कभी मिलती है। वह शुद्धतम हीरा जब हाथ में हो जाता है, अशुद्धि की खोज बंद हो जाती है।

भगवान् श्री रजनीश हिन्दी साहित्य

पुस्तक	मूल्य
१ महावीर : मेरी दृष्टि में	४०.००
२ महावीर वाणी १	३०.००
,, ,, २	३०.००
३ जिन खोजा तिन पाइयाँ	४०.००
४ ईशावास्योपनिषद्	१५.००
५ प्रेम है द्वार प्रभु का	९.००
६ समुन्द समाना बुन्द में	९.००
७ घाट भुलाना बाब बिनु	१२.००
८ सूली ऊपर सेज पिया की	७.००
९ सत्य की पहली किरण	६.००
१० संभावनाओं की आहट	६.००
११ अन्तर्वीणा	६.००
१२ ढ़ाई आखर प्रेम का	६.००
१३ मैं कहता आँखन देखी	६.००
१४ संभोग से समाधि की ओर	६.००
१५ मिट्टी के दिये	५.००
१६ साधना–पथ	५.००
१७ अर्न्तयात्रा	५.००
१८ अस्वीकृति में उठा हाथ (भारत, गांधी और मेरी चिंता)	५.००
१९ प्रेम के फूल	५.००
२० गीता-दर्शन (पुष्प-१-२)	३०.००
,, ,, (पुष्प-४)	३०.००
,, ,, (पुष्प-५)	१५.००
,, ,, (पुष्प-६)	३०.००
,, ,, (पुष्प-७)	१२.००
,, ,, (पुष्प-८)	२५.००

पुस्तक	मूल्य
,, ,, (पुष्प-९)	२५.००
,, ,, (पुष्प-११)	२२.००
२१ गहरे पानी पैठ	७.००
२२ ज्यों की त्यों धरि दीन्हीं चदरियाँ	५.००
२३ क्रांति-बीज	६.००
२४ पथ के प्रदीप	६.००
२५ प्रभु की पगडंडीया	६.००
२६ समाजवाद से सावधान	५.००
२७ सत्य की खोज	५.००
२८ मैं कौन हूँ ?	३.००
२९ शून्य की नाव	५.००
३० पथ की खोज	२.००
३१ विद्रोह क्या है ?	२.५०
३२ जन संख्या विस्फोट : समस्या और समाधान	१.५०
३३ सत्य के अज्ञात सागर का आमंत्रण	२.००
३४ कुछ ज्योतिर्मय क्षण	१.००
३५ सूर्य की ओर उडान	२.००
३६ मन के पार	१.००
३७ युवक और यौन	१.००
३८ प्रेम के स्वर	२.००
३९ गीता-अमृत	१.५०
४० ताओ उपनिषद् (४३ वां पुष्प)	२.००
४१ सुख नहीं आनंद खोजें	१.५०
४२ पाथेय	३५.००

४३ अहिंसा दर्शन	१.००	५३ कृष्ण : मेरी दृष्टि में	४०.००
४४ गांधीवाद : एक ओर समीक्षा	५.५०	५४ शून्य के पार	४.००
४५ बिखरे फूल	१.००	५५ मेडिसिन और मेडिटेशन	१.२५
४६ क्रांति की वैज्ञानिक प्रक्रिया	१.५०	५६ युवक कौन ?	२.००
४७ धर्म और राजनिती	१.००	५७ क्रांतिनाद	१.५०
४८ ध्यान : एक वैज्ञानिक दृष्टि	२.००	५८ अमृत वाणी	१.५०
४९ निर्वाण उपनिषद्	१५.००	५९ अज्ञात के आयाम	१.५०
५० ताओ उपनिषद्	४०.००	६० समाजवाद अर्थात आत्मघात्	६.००
,, दूसरा खण्ड	४०.००		
५१ मुल्ला नसरुद्दीन	५.००	६१ पद घुंघरू बांध	८.००
५२ मैं मृत्यू दिखाता हूँ	२०.००	६२ अमृत कण	१.००

पोकेट बुक

१ संभोग से समाधि की ओर	३.००	१० हँसना मना है	३.००
२ अर्न्तयात्रा	३.००	११ मैं कहता अँखन देखी	३.००
३ सत्य की खोज	३.००	१२ गहरे पानी पैठ	३.००
४ ज्यों की त्यों धरी दीन्हीं चदरियाँ	३.००	१३ क्रांति-बीज	३.००
५ ज्योतिष : अद्वैत का विज्ञात	३.००	१४ प्रेम और विवाह	३.००
६ समाजवाद से सावधान	३.००	१५ शून्य की नाव	३.००
७ भारत गांधी और मैं	३.००	१६ समाजवाद अर्थात आत्मघात्	३.००
८ युवक और सेक्स	३.००	१७ महावीर : मेरी दृष्टि में	४.००
९ संभावना की आहट	३.००	१८ महावीर : भोग और त्याग	४.००

प्राप्ति स्थान :– १. भगवान् श्री रजनीश आश्रम, कोरेगांव पार्क, पूना–१

२. जीवन जागृति केन्द्र, ३१, इझरायल मोहल्ला, भगवान भुवन, मस्जिद बंदर रोड, वम्बई–९.